ओ३म् तत्सत्

सहज मार्ग
के
दस उसूलों[1] की शरह[2]

मुसन्निफ़[3]

श्री रामचन्द्र

प्रेसीडेंट

श्री रामचन्द्र मिशन, शाहजहाँपुर (यू० पी०)

ज़ेर[4] एहत्माम[5] श्री रामचन्द्र मिशन पब्लिशिंग डिपो,
शाहजहाँपुर छपकर शाया[6] हुआ

सन् १९४८ ई०

जुमला हक़ूक़ महफ़ूज़[7] हैं] [क़ीमत फ़ी जिल्द ५)

---

१. नियम २. व्याख्या ३. लेखक ४. में ५. प्रबन्ध ६. प्रकाशित
७. सर्वाधिकार सुरक्षित ।

प्रथम संस्करण सन् १९७४ : २००० प्रतियां

© प्रकाशक : प्रकाशन विभाग
श्री रामचन्द्र मिशन
शाहजहाँपुर
उत्तर प्रदेश (भारतवर्ष)

मुद्रक : देव भारती प्रेस
१०, दरभंगा रोड, इलाहाबाद

प्रकाशकीय टिप्पणी

मूल पुस्तक "सहज मार्ग के दस उसूलों की शरह", श्री रामचन्द्र मिशन के संस्थापक-अध्यक्ष श्री रामचन्द्र जी (बाबूजी) महाराज की प्रारम्भिक एवं अनुपम कृति, सन् १६४६ में उर्दू में लिखी गई थी जिसका अंग्रेजी संस्करण Commentary on Ten Commandments of **'SAHAJ MARG'** अब तक दो बार प्रकाशित हो चुका है। हिन्दी-भाषियों के हृदय में मूलपुस्तक के अध्ययन की बड़ी उत्कण्ठा थी। परमपूज्य "बाबूजी" की इच्छा थी कि हिन्दी में प्रकाशन किया जाय पर पुस्तक का मौलिक स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहे। हमें हर्ष है कि आज हम मूल पुस्तक का हिन्दी लिप्यन्तरण उनके हाथों में दे रहे हैं। साथ ही, पाठकों की सुविधा के लिये उर्दू एवं फ़ारसी के कठिन शब्दों का हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत पुस्तक में दे दिया गया है।

इस स्पृहणीय कार्य के लिये हम इलाहाबाद केन्द्र के प्रशिक्षकों (Preceptors) श्री मिश्री लाल चतुर्वेदी भूतपूर्व जज, इलाहाबाद हाई कोर्ट तथा श्री लक्ष्मी शंकर, प्रिंसिपल, के० पी० युनिवर्सिटी कालेज, इलाहाबाद, के आभारी हैं और श्री शिवप्रसाद जी के उद्यत सहयोग की सराहना करते हैं।

आशा है, पाठकगण इससे लाभान्वित होंगे।

बसन्तपंचमी
२८ जनवरी, १९७४

अधीक्षक
प्रकाशन विभाग,
श्री रामचन्द्र मिशन,
शाहजहाँपुर
उत्तर प्रदेश

विषय सूची

विषय			पृष्ठ
दिबाचा (प्रस्तावना)		...	१
क़सीदा (श्रद्धाँजलि)		..	७
इल्तमास (निवेदन)		...	११
उसूल नम्बर	१	...	१२
,,	२	..	२६
,,	३	...	४२
,,	४	...	४६
,,	५	...	५३
,,	६	...	५७
,,	७	...	६०
,,	८	...	६३
,,	९	...	६६
,,	१०	...	६८

ओ३म् तत्सत्

कहें क्या है अजब राहे तरीक़त।
न है कुछ सोज़ नै साज़े हक़ीकत।
निहाँ ज़ुल्मत के परदे में हक़ीक़त।
अयाँ ज़ुल्मत के परदे में हक़ीक़त।*

—:o:—

*आध्यात्मिक मार्ग के विषय में क्या कहा जाय ? इसकी गति विचित्र है। परम सत्ता समस्त वाह्याभ्यन्तर अनुभूतियों एवं संवेदनाओं से परे है। यह अज्ञान के पर्दे में छिपा है परन्तु इसी पर्दे से प्रकाशित भी होता है।

दिबाचा (प्रस्तावना)

दुनियां की हर एक संस्था अपना जुदागाना (भिन्न) रंग रखती है और ख्यालात का वही मर्कज़ (केन्द्र) रहता है। कोई बड़ी हस्ती ही ऐसी हर संस्था की बानी (संस्थापक) होती है जो कि इसी ग़रज़ (उद्देश्य) से दुनियां में आती है और क़ुदरत के एहकाम (आज्ञा) के मुताबिक़ काम करती है। इसको मुख़तलिफ़ तरीक़ों से तरतीब (व्यवस्थित) देने के लिए बड़े-बड़े महात्माओं का जन्म होता है। जब दुनियां में अंधकार बढ़ जाता है तो हमेशा कोई न कोई ऐसी हस्ती ज़रूर पैदा होती है जो उस तारीकी (अँधेरे) के परदे को हटा देती है।

रुहानियत (आध्यात्मिकता) के मैदान में हिन्दू लोग अपना अस्ल कर्तव्य भूलकर इससे दूर हो गये। यह चीज़ उनसे छिनकर दूसरों के हाथ में चली गई। नतीजा यह हुआ कि असलियत से बिलकुल ग़ाफ़िल (अनभिज्ञ) हो गये। इस ग़रज़ से क़ुदरत को यह ज़रूरत लाहक़ (अत्यावश्यक) हुई कि ऐसी हस्ती मिस्ल समर्थ गुरु महात्मा रामचन्द्र जी (फ़तेहगढ़) को जगत के सुधार के लिये भेजे।

आपका जन्म २ फ़रवरी सन् १८७३ ई० बरोज़ बसन्त पंचमी हुआ। रुहानियत के मैदान में अपना पूरा हक़ अदा करने के बाद

आपने इस जहाँ फ़ानी (नाशवान दुनियां) को ख़ैरबाद (विदा) कहा। आपके बाद यह काम आपके अफ़ज़लतरीन (योग्यतम) शार्गिद महात्मा रामचन्द्र जी शाहजहाँपुरी के सिपुर्द हुआ जिनको आं हज़रत (महान-व्यक्ति) की दौरान हयात (जीवनकाल) में रुहानी मेराज (ऊँची पहुँच) मयस्सर होना शुरू हो गया था जो आइन्दा रुहानी तरक्क़ियात के लिये ज़रूरी था। बिल आख़िर (अन्ततः) विसाल (ब्रह्मलोन) आंहज़रत के बारह साल बाद मन्शाय आलो (उनकी इच्छा) का वाक़ई इन्कशाफ़ (पूर्ति) हुआ जैसा कि अकसर ज़माने क़दीम (पूर्व काल से) से ऐसी बुज़ुर्ग हस्तियों के मुतल्लिक़ होता आया है और जिसकी मिसालें भी मौजूद हैं। इस बात का इनहिसार (निर्भर) कुल्लियतन (पूर्णतया) उस बुज़ुर्ग हस्ती पर ही होता है कि हर क़िस्म का तग़ैय्युर (परिवर्तन) हस्व एहकाम (आज्ञानुसार) क़ुदरत अमल में लाकर कारवन्द (कार्यान्वित) हो। समर्थ गुरु अपने शिष्यों में से किसी बेहतरीन शिष्य में अपने आपको मुन्तक़िल (प्रविष्ट) कर सकता है जो उसके जाँनशीन (उत्तराधिकारी) की हैसियत से काम करने के लायक़ हो। चुँनाचे सन् १९२८ ई० में जनाब हज़रत क़िबला ने अपने एक क़ाबिल तरीन शिष्य मुन्शी मदन मोहन लाल साहब से जो उस वक्त शाहजहाँपुर सतसंग के मुह्तमिम (प्रबन्धक) थे फ़रमाया था कि "रामचन्द्र चिराग़े खान्दान होगा"। इस बात का तज़किरा उस ज़माने के मख़सूस (प्रमुख) सतसंगी भाइयों से भी किया गया था।

किसी शख्स को इस तरह अपने मानिन्द बनाना आँ हज़रत जैसी बुज़ुर्ग हस्ती के लिये कोई नई बात न थी। आपके पैरो (शिष्यों) में से हर एक जानता है कि आपको यह क़ुदरत (शक्ति) हासिल थी कि एक निगाह में ज़रूरत ज़माने के मुताबिक़ आदमी बनादे। आपकी वसात (क्षमता) का सही अन्दाज़ा बजुज़ (सिवाय) ज़ात पाक (परमेश्वर) के दूसरे को मुहाल (कठिन) है। यह नियम और उनका तशरीही

(व्याख्या) फ़िलस्फ़ा आपकी लामहृदूद (असीम) क़ुदरत का एक करश्मा है। यह रुहानी फ़िलस्फ़ा उन लोगों को हैरत में डालेगा जो इसका मुताला (अध्ययन) बग़ौर फ़रमायेंगे और उसको समझने की क़ाबिलियत रखते होंगे।

लोग महात्मा रामचन्द्र जी शाहजहाँपुरी की इस्तैदाद (योग्यता) का अन्दाज़ा उन लहरों की रवानी से लगा सकते हैं जो कि आपके दिल से रवां हुई है। इन्सानी ज़िन्दगी की उक़दा कुशाई (रहस्य खोलने) के लिए आपने 'सहज मार्ग', रायज (चलाया) किया। इस नाम का इनकेशाफ़ (निर्देश) आप पर आलमेबाला (ऊपर) से हुआ है। लोग इसे यावर (विश्वास) करें या न करें मगर क़ुदरत की रवानी इसी रुख़ पर है। इस मसले पर इख्तलाफ़ राय हो सकता है जैसा कि अमूमन होता चला आया है। बुज़ुर्गाने सुल्फ़ (महान दार्शनिक) की ज़िन्दगी में ऐसे वाक़यात आमतौर पर पेश आये हैं जबकि लोगों ने उनको हर तरह से बुरा भला कहा है। श्री कृष्ण जी महाराज और दूसरे बुज़ुर्गान सुल्फ़ इसकी मिसाले हैं। एक बड़ी मुश्किल यह है कि लोग अमूमन किसी बड़ी हस्ती की क़ुदरत का अन्दाज़ा किये बग़ैर नतीजा अख्ज़ (निकाल) कर लेते हैं जिसका तजुर्बा सिर्फ़ अमली तौर पर ही हो सकता है। आज़ादी तबा (स्वच्छन्दता) जो उसको क़ुदरत से मिलती है उस बुज़ुर्ग हस्ती की तवज्जह इन तरीक़ों की तरफ़ मबज़ूल (निदेशित) कर देती है जो कि अवाम की बहबूदी के लिए हो। इसको ज़रूरी ताक़त क़ुदरत से मिलती है जो उससे कुछ भी उठा नहीं रखती। वह क़ुदरत के मर्ज़ी के मुताबिक़ ऐसे तरीक़े अमल में लाता है जिनकी रुहानी तरक़्क़ी के लिये उस वक्त ज़रूरत होती है। उसको अख्तयार होता है कि बिला लेहाज़ नतायज (परिणाम) जुमला बातों की दुरुस्ती और इस्लाह (सुधार) के लिये मुनासिब तौर पर अमल करे और क़ुदरत की रवानी उसकी मददगार रहती है।

दूसरे लफ़्ज़ों में क़ुदरत उसको उन तरीक़ों और कामों में मदद देती है जो कि उसने बनीनौ (मानव जाति) के फ़ायदे के लिये अख्तयार किये हैं। यह क़ानून क़ुदरत है जो टल नहीं सकता। हिदायतें हमेशा अस्ल भण्डार से आती हैं। वह उन हिदायतों के मुताबिक़ जो उस पर बराह रास्त (सीधे) नाज़िल (उतरती) होती हैं काम करने के लिये ख़ुद मुख़्तार होता है। अब 'सहज मार्ग' का बानी भी इस तरह पर ख़ुद मुख़्तार होते हुए ज़रूरत ज़माने के मुताबिक़ बनीनो की रूहानी तरक़्क़ी के लिए कारबन्द है। उस पुरानी चीज़ को एहकाम क़ुदरत के मुताबिक़ नया जामा पहनाया गया है। नियम मुरत्तिब (बनाये) किये गये हैं और उनकी तह में जो फ़िलस्फ़ा है उस पर रोशनी डाली गई है जिसके पढ़ने से सहज मार्ग के मूमिद (संस्थापक) की इस्तदाद (क्षमता) का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। इसकी तह में जो सायन्स है उस पर आज तक किसी की निगाह ही नही गई। इन्सान और ज़ात (परमात्मा) के दरमियानी ताल्लुक़ात पर रोशनी डाली गई है और इससे दुनियां के बड़े-बड़े फ़िलास्फ़रों को ग़ौरो ख़ौज (गहन अध्ययन) का मौक़ा मिलेगा। इससे दो मक़सूद हासिल होगे। अव्वल यह कि इनको रोज़ाना ज़िन्दगी में अख्तयार करने से इन्सान वाक़ई इन्सान बन सकता है। दोयम यह कि जो रुहानी फ़िलस्फ़ा के आलिम बनना चाहते हैं वह इसको पढ़कर लज़्ज़त दिमाग़ी हासिल कर सकते हैं मगर सिर्फ़ इसका अमली पहलू ही इन्सान का मुस्तक़बिल (भविष्य) बना सकता है। और यह तब ही मुमकिन है जबकि मुतलाशी (अभ्यासी) खुद उस रुहानी मुहक़्क़िक (पूर्णज्ञाता) की सोहबत से बारयाब (लाभान्वित) हो। इस किताब की फ़िलासफ़ी पर अगर काफ़ी ग़ौर किया जाय तो तहय्युर (आश्चर्य) का आलम पेश नज़र होगा।

मैं पढ़ने वालों से दरखवास्त करूँगा कि वे इसका मशाहिदा (अध्ययन) अन्दरुनी आँखों से करें। इस तरह चश्म हक़ीक़त खुल

जायगी । क़ुदरत के राज़ योगियों के दिलों में मखफ़ी (छिपे) हैं । इनके दिलों का मुताला करके रुहानी सायन्स से क़ुर्बत (परिचय) हासिल कीजिये । यह सिर्फ़ उस वक़्त मुमकिन है जबकि कोई शख्स उस योगी की हिदायतों के मुताबिक़ अमली पहलू अख्तयार करे । अमूमन लोग इस चीज़ को बहुत ही पेचीदा ख्याल करते हैं मगर यह सिर्फ़ एक परदा है जो दरमियान में हायल (पड़ा) रहता है । आसान चीज़ हासिल करने के लिये आसान तरीक़ा ही अमल में लावो । किताब का हर जुमला निहायत ही पुरमानी (महत्वपूर्ण) है । मुताला सरूर दिमाग़ी (मानसिक आह्लाद) बख्शेगा (देगा) और अमल (अभ्यास) एहसास बातिनी (आन्तरिक अनुभव) ॥

करुणा शंकर
पूरनपुर
ज़िला-पीलीभीत

समर्थ गुरू
महात्मा श्री रामचन्द्र जी महाराज
फ़तेहगढ़ (उत्तर प्रदेश)
(१८७३-१९३१)

क़सीदा ब यादगार समर्थ गुरु श्री महात्मा रामचन्द्र जी महाराज फ़तेहगढ़

आफ़ताबे[1] मारफ़त[2] ऐ [3]नुक्तादाने मारफ़त ।
[4]रहनुमाये [5]सालिका ऐ [6]जिस्मोजाँने मारफ़त ॥
तेरी हर [7]तरज़े [8]रहायश में थी शाने मारफ़त ।
हर अदा में थी तेरी [9]नूरे [10]जँहाने मारफ़त ॥
हो चुका गो वस्ल[11] फिर भी है समाधि पर वह नूर ।
[12]ज़र्रे ज़र्रे में है अब भी [13]आनो बाने मारफ़त ॥
हर तरफ़ देखा जो तूने [14]मतलये [15]ज़ुल्मत-मुआब ।
तूने बदली सरज़मीनो-आसमाँने मारफ़त ॥

---

(१) सूर्य; (२) ब्रह्म-ज्ञान; (३) भेद जानने वाला; (४) राह बताने वाला; (५) डूबे हुये (६) शरीर व आत्मा; (७) तरीक़ा, ढंग; (८) रहन-सहन; (९) प्रकाश; (१०) संसार; (११) योग (स्वर्गवास); (१२) कण-कण; (१३) शान शौकत; (१४) पूर्वी आकाश; (१५) तमग्रसित (अंधेरा);

बनके [१६]मूजिद इकसहज से मार्ग की डाली [१७]बिना।
इक नई बुनियाद पर रखा मकाने मारफ़त ॥
[१८]जुंबिशे [१९]अबरू में थी क्या जाने क्या-क्या [२०]आबोताब।
जगमग उठा था जिससे आसमाने मारफ़त ॥
फूंक दी वह [२१]रुह जिसका [२२]फ़ैज़ है अब तक [२३]रवां।
हर तरफ़ फूला फला है [२४]गुलिस्ताने मारफ़त ॥
हर [२५]तकल्लुम में थी तेरी प्रेम की [२६]मौजें रवां।
हर इशारे में रवां थी [२७]दास्ताने मारफ़त ॥
[२८]दीदनी था [२९]सब्रो-[३०]इस्तकलाल का [३१]हुस्ने कमाल।
तुझ पै थे सौ जां से कुर्बान [३२]शायक़ाने मारफ़त ॥
सच हुआ जो कुछ कहा था तूने [३३]बरवक्ते विसाल।
जाग उठेगा खुद ही [३४]बख्ने [३५]खुफ़तगाने मारफ़त ॥

---

(१६) आविष्कार कर्ता; (१७) बुनियाद, नींव; (१८) हिलना; (१९) माथे पर आँख का ऊपरी भाग, भौं; (२०) चमक-दमक; (२१) जागृति; (२२) लाभ, श्रोत; (२३) जारी; (२४) बगीचा; (२५) बातचीत; (२६) लहरें; (२७) कहानी; (२८) दर्शनीय; (२९) सन्तोष; (३०) स्थिरता; (३१) परिपूर्णत्व का सौन्दर्य; (३२) शौक रखने वाले; (३३) अन्तिम समय में; (३४) भाग्य; (३५) सोने वाले;

"मेरे परवानो[३६] की ख़ातिर शमाँ जल उठेगी खुद ।
खुद बखुद दौड़ेंगे उस पर तालिबाने[३७] मारफ़त" ॥
आज है फ़ज्लो करम से तेरे वह रौशन चिराग़ ।
रोशनी पाते हैं जिससे आशिक़ाने मारफ़त ॥
चश्म हक़ बी[३८] देख ले बिसमिल निगाहे शौक़ से ।
फूलता फलता है कैसा बोस्ताने[३९] मारफ़त ॥

अज़क्लम मदनमोहन लाल श्रीवास्तव
वकील बदायूं
यके अज ख़ादिमान जनाब हज़रत क़िबलेममदूह
(उस महान विभूति का एक अकिंचन सेवक)

---

(३६) प्रेमी, निछावर होने वाले; (३७) इच्छुक; (३८) सत्य दृष्टा; (३९) बाग़।

●

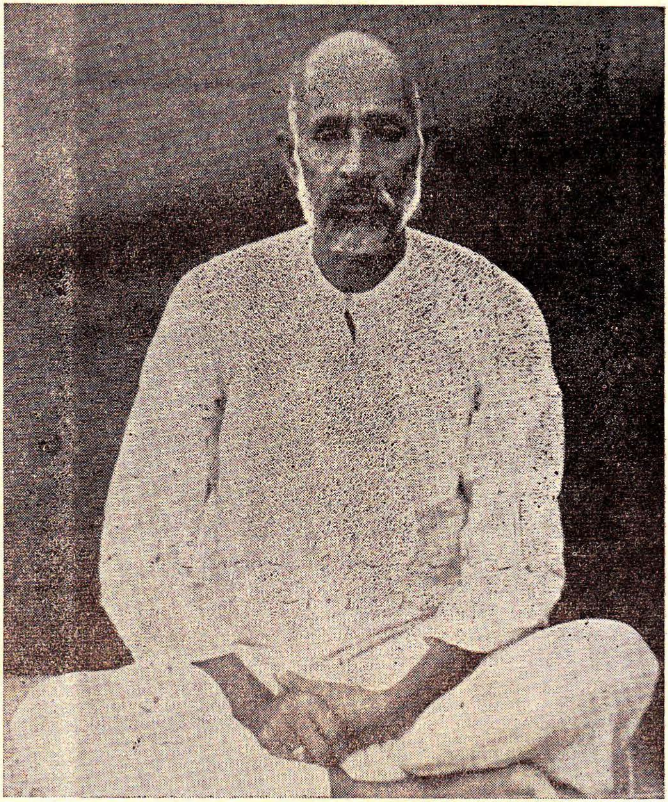

श्री रामचन्द्र जी महाराज
शाहजहाँ पुर, (उत्तर प्रदेश)

इल्तमास (निवेदन)

मैंने उन रुहानी राज़ों को जो अब तक सीना ब सीना चले आते थे अल्फ़ाज़ में बांध कर किताब की शक्ल में लाने की कोशिश की है। मगर चूँकि यह मामलात अनुभव से ताल्लुक़ रखते हैं जो नेचर के मुताले (अध्ययन) पर मुनहसिर हैं और जिनका इन्केशाफ़ (ज्ञान) बज़रिये vibration होता है लेहाज़ा इनका इज़हार अल्फ़ाज़ में न सिर्फ़ मुश्किल बल्कि बसाऔक़ात (बहुधा) ग़ैर मुमकिन हो जाता है—

मुहब्बत मानी व अल्फ़ाज़ में लाई नहीं जाती।
यही ऐसी हक़ीक़त है जो समझाई नहीं जाती॥

इस लेहाज़ से मुनासिब है कि अल्फ़ाज़ की तरतीब (क्रम) और इबारत की बन्दिश (प्रतिबन्ध) की ख़ामियों को नज़र अन्दाज़ करते हुए शायक़ीन अस्ल मफ़हूम (आत्मा को) समझने की कोशिश करें और उससे ख़ुद मस्तफ़ैज़ (लाभान्वित) होकर दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने के कोशाँ हों॥

मुसन्निफ़

मोरेखे (दिनाङ्क) ८ दिसम्बर सन् १९४६ ई०

उसूल नम्बर-१

सुबह सूरज निकलने से पहले हर एक भाई उठे और सन्ध्या उपासना हत्तुलवसा (यथासंभव) सूरज निकलने से पहले मुक़र्रा (निश्चित) वक्त पर ख़त्म कर दे। पूजा के लिये एक अलहदा जगह और आसन मुक़र्रर कर ले। जहाँ तक हो सके एक ही आसन से बैठने की आदत डाले। जिस्मानी और मानसिक पाकीज़गी का ख़ास ध्यान रखे।

क़ुदरत की आग जो रोज़े-अज़ल (सृष्टि के आरंभ) से जली है अब तक ठण्ढी नहीं हुई है। जब श्रृष्टि की पैदाइश का वक़्त आया ख़्याल ने हरकत की। अजज़ा (परमाणुओं) में गर्मी पैदा हो गई। गोया पहला ग़िलाफ़ रोज़े-अज़ल से चढ़ गया। इस आँच ने ज़र्रात को गरम कर करके हरकत देना शुरू कर दी। यह हिद्दत (गरमी) बढ़ती ही गई। ग़िलाफ़ दर ग़िलाफ़ चढ़ते ही गये। ठोसता बढ़ती ही गई। तज़लज़ुल (कम्पन) पैदा ही होता गया। सब ने अपना-अपना फ़ेल शुरू कर दिया और फिर उसमें भी फ़ेल हुआ ही किये। नतीजा यह हुआ कि उसने अपने ऊपर, दूसरे अल्फ़ाज़ में, रेशम के कीड़े की तरह ग़िलाफ़ बना लिया। अण्डे की सफ़ेदी झलकने लगी। अस्लियत अन्दर

छिप गई। जज़्बा (लगाव) पैदा होता गया। अब जिसको उससे ज़्यादा लगाव या मुहब्बत थी उसके हिस्से में यह चीज़ ज़्यादा आई और वही गर्मी जो रोज़े-अज़ल में थी इन्सान में नमोदार (प्रकट) हुई। यह गर्मी कितनी आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ी और पक पकाकर नमूद (स्थूल) की शक्ल बन गई। हर ज़र्रा पर उसका असर पड़ा और उसने उसमें हिस्सा लिया। यह चीज़ ज़मीनी थी जो उसमें शामिल हो गई। यह हमेशा उस चीज़ के ताबे (अधीन) रही जिसका हिस्सा उसमें शामिल है। या वह बड़ी तह जो गर्मी से बन चुकी है वह अपनी निस्बत उससे ज़्यादा रखेगी। अब जो असरात इस बड़ी चीज़ पर पड़ेंगे उसका अक्स छोटी चीज़ में नमोदार होगा। अगर ख़ारजी (बाहरी) असर बड़ी चीज़ पर पड़ता है तो जसामत (शरीर के अनुरुप) के लेहाज़ से उस छोटी चीज़ पर भी पड़ेगा। इन चीज़ों पर असरात बेरुनी (बाहरी) भी हुआ करते हैं। शोआओं (सूर्य किरणें) का असर छोटी बड़ी सब चीज़ों पर होता है। दोनों के काम बलेहाज़ जसामत क़रीब-क़रीब एक ही हो जाते हैं। गर्मी जो ख़ार्जी असरात से पैदा हो जाती है वह निकलना भी शुरू हो जाती है और चैन उस वक़्त मिलता है जब यह गर्मी शान्त हो जाती है। इसकी मिसाल मौसमे गर्मी हो सकती है। यह ख़ार्जी असरात जिनको बलेहाज़ जसामत हटने में वक़्त लगता है अगर दूर हो गये तो कुछ चैन व सकून (शान्ति) ज़रूर आ जाता है। अब यह समय महात्माओं ने उस वक़्त माना है जबकि ख़ार्जी असरात उस पर से हटना शुरू हो जाते हैं। गोया यह गरमी के ख़ात्मा का वक़्त होता है और गरमी ख़त्म होते ही ठण्डे असरात आने लगते हैं। इन दोनों के मेल को सन्धिगति कहते हैं। महात्माओं ने इस सन्धिगति में पूजा और उपासना करना फ़र्ज़ रखा है। इस वक़्त उस चीज़ के आने का वक़्त होता है जो गरमी से मुख़्तलिफ़ है। और वह चीज़ क्या हो सकती है? और यह वही चीज़ हो सकती है जो अज़ल में गरमी के पैदा होने से पहले थी।

समझिये तो सही। कैसा अच्छा वक़्त क़ुदरत से मुताबक़त (मेल) रखता हुआ सोच समझकर मुक़र्रर किया गया है। यानी यह वह वक़्त है जो कि उस हालत से मिलता जुलता है या यूं कहो कि उस हालत की ठोस अवस्था है जिस पर कि हमको पहुँचना है। एक बात और कहूँगा। यह बात असल की नक़ल है। गोया यह नुक़्ता (बिन्दु) है जिससे हमको आगे बढ़ने का मौक़ा मिलेगा और यह नुक़्ता कैसा अच्छा फ़र्ज़ किया गया है जो उस हालत से मिलता जुलता है जिस पर हमको पहुँचना है।

तम (दोपहर) की सन्ध्या पर भी ज़ोर ज़रूर दिया गया है। मगर इस ताक़त का इस्तेमाल दूसरे तरीक़ा में किया गया है। आफ़ताब की शोआएँ उस वक़्त बराह रास्त (सीधी) होती हैं और गरमी ज़्यादा पैदा करती हैं। यह गरमी भी उसमें चिपकी होती है और उसी से आई है जो हर चीज़ का मम्बा (श्रोत) है। अब हम अस्ल ताक़त से जो गरमी द्वारा (ज़रिया) उस वक़्त मौजूद होती है चिपक जाते हैं। गोया उस ताक़त से हम क़रीब हो जाते हैं और यह बात उस वक़्त तक क़ायम रहती है जब तक इस गरमी के शान्त होने का वक़्त आ जाता है। गोया हमने उससे भी फ़ायदा उठाया और इस तरीक़े से हम इसके क़रीबतर हो गये। अब वह वक़्त आ रहा है कि हम उसके क़रीबतर पहुँचकर रफ़्ता-रफ़्ता उस हालत का मज़ा चखेंगे जो उससे कुछ हटकर है। हम क़रीबतर हो गये और अब क़रीबतरीन हालत में जा रहे हैं जो वक़्त इसके बाद आ रहा है। इस अमल ने हमको उसमें पहुँचने में मदद दी। इसलिये महात्माओं ने दोपहर की सन्ध्या भी बतलाई है। वजह यह है कि आफ़ताब की शोआएँ असर डालते-डालते अपना सिलसिला उस हिस्से से क़ायम कर लेती हैं जिस जगह से कि शोआयें आ रही हैं और जो इसके बाद वाली हालत है। यह शोआयें चूँकि दोपहर को सीधी पड़ती हैं लेहाज़ा क़रीब तरीन

होने की वजह से वह असर भी उनके द्वारा सीधा आता है। गरमी जो आफ़ताब से आई हुई मालूम होती है यह वाक़ई ज़र्रात की गरमी है। अब अगर हम दोपहर को बैठकर ख्याल बांधें तो नादानिस्ता (बग़ैर जाने) तौर पर हमारा ख्याल मर्कज़ या अस्ल मक़सूद (ध्येय) की तरफ़ खिचने लगता है। इसको यों समझिये कि अकसर किसी मसले को हल करने के लिये हम जवाब पहले फ़र्ज़ (कल्पना) कर लेते हैं। इसी तरह इन्सानी ज़िन्दगी के मसले को हल करने के लिये भी हमको वह अस्ल चीज़ पहले फ़र्ज़ कर लेना पड़ती है ख्वाह उसकी शक्ल हमारे ख्याल में कितनी ही धुँधली क्यों न आये क्योंकि किसी चीज़ की इन्तहाई (आख़िरी) हालत पर पहुँचने पर उसकी पीछे वाली चीज़ का बोध नहीं रहता। इसलिए इस इन्तहाई हिद्दत से हमने अपना काम निकाला है। और चूँकि ज़र्रात की यानी माद्दी (द्रव्यीय) गरमी भी इस वक़्त ज्यादा होती है इसलिए दोपहर की संन्ध्या की पाबन्दी हम अपने यहां लाज़मी क़रार नहीं देते।

दोपहर की संन्ध्या ख़त्म होते-होते फिर शाम का वक़्त आ जाता है। उस वक़्त तक गरमी किसी हद तक शान्त हो चुकी थी। गोया उस ठण्ढ के आप क़रीब हो चुके थे। अब जितना वक़्त गुज़रता गया ठण्ढ के क़रीब होते चले गये। आख़िर को वह नुक्ता आ गया कि जब हम उसके क़रीबतर हो गये, और, यह सुबह का वक़्त था। इस वक़्त आफ़ताब की गरमी किसी तरह से अपना दख्ल (उपस्थिति) नहीं किये हुए थी। यह सायन्स का मसला है और इसी लेहाज़ से इन वक़्तों की तक़सीम बलेहाज़ गरमी सरदी के होती है।

यहाँ पर एक सवाल यह पैदा होता है कि सत और तम के समय त्रिकाल संन्ध्या मुक़र्रर की गई रज के वक़्त क्यों नहीं की गई? ग़ालिबन आप तनासिब (संबन्ध) के मसले उलटफेर (Invertendo) से वाक़िफ़ होगें। दोनों सिरे यानी इब्तदा (आरम्भ) और इन्तहा

(अन्त) लिये गये हैं। इब्तदा सत है और इन्तहा तम। इसको उलट दो। इन्तहा, इब्तदा हो जायगी और इब्तदा इन्तहा। दरमियानी चीज़ कुछ भी नहीं है वजुज़ (सिवाय) एक फ़र्ज़ी लकीर के जो दोनों सिरों को मिलाती है।

आज मैं वह फ़िलस्फ़ा खोल रहा हूँ जिससे कि लोग कम आश्ना (जानकारी) हैं। आमतौर पर लोग सत ही को अस्ल तसव्वर (समझते) करते हैं। और ईश्वर को जानने का यही पैमाना बना रक्खा है लेकिन उसके पसेपुश्त (पीछे) जो राज़ है उसे नहीं जानते। वह ख़ास चीज़ जो इसके तह में है उन पर अब तक मुनकशिफ़ (प्रकट) नहीं हुई। यह सब तम और सिर्फ तम ही की कैफ़ियात (हालत) हैं। योगियों को हासिल करने के लिये यही ख़ास चीज़ है। इस नुक़्ता तक पहुँचना बहुत दुश्वार है। सत का हासिल करना नेहायत आसान है। लेकिन, वह हालत जिसको मैंने तम के नाम से मौसूम (लिया) किया है इतनी जल्दी हासिल नहीं की जा सकती। इसके बाद कुछ नहीं है। अमूमन लोग बातें तो बहुत करते हैं मगर चीज़ों की तह तक कोई नहीं जाता। सफ़ाई, सादगी और सकून भी इसके पीछे नहीं है। यानी वह इन सब से परे है। यही वह चीज़ है जो आपको बरसों की मेहनत और बेशुमार जन्मों के बाद हासिल होती है। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि दुनियां के बड़े-बड़े फ़ुक़रा इस नजारह (दृश्य) से जैसा कि मैंने ऊपर बयान किया है पीछे रहे। नफ़ी (शून्यता) की हालत जिसके आप मुतलाशी (तलाश) हैं और जो वाक़ई ज़िन्दगी है इसी में है। और जुमला हरकात इस नुक़्ते पर पहुँचने से पेश्तर ख़त्म हो जाते हैं। यह क़ुदरत का राज़ है जो मैं आज खोल रहा हूँ। ईश्वर या ज़ात की कैफ़ियत का महोर (केन्द्र) कुल्लियतन (सम्पूर्ण) यही नुक्ता है। लोगों ने मुद्दतों जिस्तजू (प्रयत्न) की और ढूंढते रहे मगर हमेंशा इस अस्ल कैफ़ियत से पीछे ही रहे।

यहाँ इदराक (इन्द्रियों) का गुज़र नहीं। लोग तम की इस कैफ़ियत को अपना जानी दुश्मन समझते हैं। लेकिन क्या आपने कभी किसी ऐसे सीधे सादे शख़्स को देखा है जिसकी निस्बत इस जहालत (अज्ञान) से हो और जिसमें यह कैफ़ियत पूरे तौर से मौजूद हो ? उसकी कैफ़ियत क्या होती है ? जबकि वह तरक़्क़ी करते-करते इस हालत पर जिसको कमाल कहते हैं पहुँच जाता है तो फिर वह अपनी हालत का इज़हार नहीं कर सकता। ठीक उसी तरह जैसे कि एक नासमझ बच्चा अपनी कैफ़ियत ख़ुद बयान नहीं कर सकता। लेकिन अगर कहीं सत का हल्का छींटा इसमें दे दिया जाय तो उसको अपनी तम की कैफ़ियत का अन्दाज़ होने लगेगा। ऐसा क्यों है ? इसलिए कि दोनों के मिलने का जो नुक़्ता है वह एक नई चीज़ पैदा कर देता है जो वही है जो पैदायशे आलम की बुनियाद है। अब फिर वही मसला उलट फेर (Invertendo) का आ जाता है जैसा कि मैं ऊपर ज़िक्र कर चुका हूँ।

साने हक़ीक़ी (निर्माणकर्ता) की तीसरी कैफ़ियत क़ुदरत का आरायशी (व्यक्त जगत) नज़ारा है। लोग दर हक़ीकत इसी में मसरूफ़ (व्यस्त) रहते हैं और तबीयत को इधर-उधर भटका कर ख़्वाहिशात का अम्बार जमा करते रहते हैं। आपकी नज़र सब से पहले चमकीली चीज़ पर पड़ती है जिसको कि आप सत कहते हैं। यह चमकीली चीज़ सिवाय माया के और कुछ नहीं है। लोग इसी के बारे में बढ़-बढ़ कर बातें मारते हैं जो कि दरहक़ीकत अभी अस्लियत और रुहानियत के दायरे से कोसों दूर है। लोगों ने अपनी ऐसी गुँग अवस्था बनाई है कि न वह इसको सुनना चाहते हैं और न इसके एहसास की कोशिश करते हैं। उन्होंने वह अस्ल चीज़ जिसके आगे न रोशनी है और न अंधेरा गुम कर दी है। यही वह चीज़ है जो मैंने अपने मिशन के निशान (Emblem) में दिखाई है। इन्सानी उरुज (उन्नति) की अस्ल

कैफ़ियत यही है। और यहाँ से नीचे गिराव का इमकान (संभव) बाक़ी नहीं रहता। फ़िलस्फ़ा बहुत दक़ीक़ (जटिल) है। महात्माओं ने इस हालत को जहाँ पर न रोशनी है न अंधेरा सत्यपद के नाम से मौसूम किया है। लेकिन उनका यह ख़्याल सही नहीं है। वह चीज़ इससे भी आगे है। यह महज़ उस अस्ल का परतो या अक्स है। वाक़ई हक़ीकत इसके बाद है।

लोगों को यह बातें जानकर वाक़ई ताज्जुब होगा। मगर मैंने यह मज़मून उन लोगों के लिये लिखा है जो रुहानियत में बख़ूबी तरक़्क़ी किये हुए हैं और इस सायन्स से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं जिसका ज़िक्र कर रहा हूँ। इसको सिर्फ़ अनुभव या कश्फ़ ही बता सकता है। यह चीज़ मज़हबी क़यूद (नियमों) में पाई नहीं जाती। इसका रास्ता जुदा-गाना है। यह इल्म बज़ात ख़ुद एक सायन्स है। और जब तक कोई शख़्स अपने आपको इस क़ाबिल न बना ले कि क़ुदरत का मुशाहिदा (देखना) अपनी अन्दरूनी आँख से करे तब तक उसका अहल (पात्र) नहीं हो सकता। और उस वक़्त तक उसकी रसाई (पहुंच) उसके आसतां (चौखट) तक भी नहीं हो सकती समझना तो दरकिनार। मज़हब आपको सिर्फ़ इसके समझने में मदद दे सकता है कि क़ुदरत में मुशाहिदा के लिये कुछ और भी है लेकिन जवाहरात चुनने के लिये आपको ख़ुद अन्दर घुसना पड़ेगा। दरअस्ल हक़ीक़त की सादगी, सफ़ाई और मासूमियत ही ख़ुद उसका नक़ाब (पर्दा) बन गई है। यह किताब इल्म रूहानी के मुब्तदी (आरंभ करने वाले) के लिये नहीं लिखी गई है बल्कि मुन्तही (समाप्त करने वाले) के लिये जो कि दरियाय मारफ़त में काफ़ी तैर चुका हो।

सूरज निकलने के पहले सन्ध्या का समाप्त करना यूँ कहा गया है कि वह गरमी जो जिस्म से रूख़सत हो चुकी है या वह ख़ारिजी

असरात जो ज़ाया हो चुके हैं धूप के असर से फिर न पैदा हो जांय और वक़्त से हम इतना अच्छा फ़ायदा न उठा सकें। महात्माओं ने इस बात पर ज़ोर दिया है और मग़रबी (पश्चिमी) तहज़ीब ने भी इस बात को साबित कर दिया है कि हर काम के लिये एक ख़ास जगह मुक़र्रर होना चाहिये ताकि वहां पर पहुँचने से वही ख़्यालात दौरा करने लगें जो उस काम के लिये मख़सूस हैं। ताक़त इन्सान में है और वह ताक़त उसको ख़्याली अटकाव से जिसका ताल्लुक़ अस्ल चीज़ से है मिली है। जब हम किसी काम के करने की नियत बांधते हैं तो वह रस्सी-लगाव या तनाव जो इन दोनों चीज़ों के दरमियान में है गहरा सम्बन्ध क़ायम कर लेता है। गोया हम अपने ख़्याल के मुताबिक अस्ल से ताक़त घसीटने लगते हैं। जब ताक़त घसिटती है और हम उसको किसी ख़ास वक़्त से निस्बत देकर मज़ावलत (प्राप्त) कर लेते हैं तो उस वक़्त अपने कामों की याद आ जाती है। इसलिए अगर हम संन्ध्या के लिये एक वक़्त मुक़र्रर करते हैं तो हमारा ख़याल उस तरफ़ सीधा होने लगता है, और हम किसी न किसी शक्ल में उसकी याद में ख़ुद बख़ुद मशग़ूल हो जाते हैं। जो कमरा या जगह हमने इस काम के लिए मुक़र्रर की है उसमें बैठकर हम सन्ध्या करते हैं और अपने ख़्याल की बिजली बहुत कुछ उसमें गिरा देते हैं जिससे उस मुक़ाम पर पवित्रता का एहसास होने लगता है और वह जगह वही असरात ले लेती है। इसलिये हमको उस काम में मदद मिलती है। इसका यानी पवित्रता का असर उस जगह पर ही मुहीत (सीमित) नहीं रहता बल्कि फैलने लगता है। अब यह अपने क़ूवत पर है कि जिस क़दर उसको फैला सके। देखा गया है और इबादतगाह (पूजाघर) शाहिद (गवाह) हैं कि बरसें गुज़र गईं उसका असर अक्सर मुक़ामात पर अब तक ख़त्म नहीं हुआ। यहाँ तक कि जाने वाले और ज़्यारत (यात्रा) करनेवाले भी मोअस्सर (प्रभावित) हो जाते हैं। यहीं नहीं बल्कि हवा का गुज़र चूँकि होता रहता है वह उसकी महक

अपने में शामिल करती रहती है और उन तहों को पहुँचाती रहती है जो इससे वाबस्ता (बंधे) हैं और हर तह में बढ़ाव और सिमटाव होता रहता है। इस तरकीब से वह चीज़ जो अन्दर दाख़िल हुई है बढ़ती रहती और अपना असर फैलाती रहती है।

अब सुनिये आसन के बारे में। यह योग के अंगों में से एक अंग है। महात्माओं ने इस पर बहुत ज़ोर दिया है और यह पहली सीढ़ी योग की है। इसकी तह में जो राज़ है आज तक ज़ाहिर नहीं किया गया। समय पर हर बात खुलती है। वक़्त पर हर चीज़ पर रोशनी पहुँचती है। पैदायशे आलम से पहले हर चीज़ क़रीब-करीब साकिन (शान्त) हालत में थी और अपने अस्ल में शामिल हो चुकी थी। बावजूद कि यह चीज़ें अपने अस्ल में शामिल हो चुकी थीं और अपनी हालत क़रीब-क़रीब खो चुकी थीं फिर भी उनके असरात बाक़ी रह गये थे जो इस वजह से कि अस्लियत का परतो (परछाई) उन पर काफ़ी देर तक रह चुका था और उस वक़्त तक रहा जब तक कि प्रलय नहीं हो गई मौजूद रहे और उस वक़्त तक यानी कायनात (सृष्टि) के फैलाव और क़याम (ठहराव) के वक़्त तक मौजूद रहे। इस बात का अन्दाज़ा ख़्याल नहीं लगा सकता कि यह चीज़ें कितने अर्से तक अस्ल के परतो के ज़ेर असर रहीं। यह कम से कम उस अर्से तक ज़रूर रहा होगा जितने अर्से तक बराबर अस्ल चीज़ का उन्होंने असर लिया है। ख़याल फ़रमाइये कितने अर्से तक बराबर अशिया (वस्तु) जो ज़हूर तरतीब (सृष्टि विन्यास) में मददगार हुई है असर लेते रहे हैं। यह ज़रूर है कि उन्होंने अपनी ठोसता खो दी थी मगर असर ज़रूर था और वह मय उस असर के उसमें शामिल हो गई। असर क्या था जो उन्होंने लिया? वह हरकत थी जो बड़ी ताक़त के झटकों से उसमें पैदा हुई। यह चीज़ वहाँ पर रहकर असर से पुर (पूर्ण) होने के बायस (कारण) धीमे-धीमे हरकत करती रही। इस कुल ताक़त में क़ुदरत से किसी न

किसी शक्ल में वह तहरीक (गति) जो दिखाई नहीं पड़ती बल्कि मुश्किल से एहसास में आती है क़ायम रही। गोया खिचड़ी पकती रही और, यह बात मुद्दत मदीद (दीर्घकाल) तक जारी रही। इसको ज़ात (भूमा) में मख़फ़ी (गुप्त) हरकत होना कहा गया है। यह बात मुतवातिर जारी रही हत्ताकि (यहाँ तक कि) फिर पैदायशे आलम (सृष्टि) का वक़्त आ गया। अब यह वक़्त क्यों आ गया ? क्या ज़रूरत थी ? क्या वजह थी ? इन्हीं मख़फ़ी हरकतों ने जो महज़ ताक़त ही ताक़त थी निकलने के लिये शिगाफ़ (दराज़) बना दिये और अज़ सरे नौ (पुनः) वह ताक़त रवां होने लगी। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुँची कि उनकी तरतीब (क्रम) ने फिर तरतीबे कायनात (सृष्टि-रचना) शुरू कर दी। इन्सान बनने लगा। उसको अपने अस्ल में पहुँचने की जिस्तजू (जिज्ञासा) होने लगी। और यह बात उसमें यूँ पैदा हुई कि वह जौहर (शक्ति) जिसका जुज़्व (अंश) उसमें मौजूद था बवजह ताक़तवर होने के उसको अपनी तरफ़ कशिश करने लगा। और वह चीज़ जो मुतहरिक (गतिवान) होकर ज़हूरे तरतीब का बायस हुई है इन्सान में भी आई और यह चीज़ साकित (स्थिर) हालत के ख़िलाफ़ थी क्योंकि इसकी बिना (जड़) हरकत थी। अब इस साकित हालत में जाने का ख़्याल पैदा हुआ। लाज़िम आया कि जो हरकत कि इन्सान में पैदा हो चुका है उसको जहाँ तक हो सके मख़फ़ी हालत में लाना चाहिये। इसके लिये तरकीबें ढूढ़ने लगा। समझ में आ गया कि जैसी मख़फ़ी हरकत एक तरीक़े से बमुकाबले ज़ात के ठोसता की हालत में थी जिसका लगाव अपने अस्ल से था इसी तरीक़े से हमको कोई बात ठोसता की लेना चाहिये ताकि हम उद्देश्य पर जो कैफ़ियत ज़ात और अस्ल की है पहुंच सकें। यह ख़्याल आते ही समझ में आया कि कुछ सिमटाव की सूरत अपने में पैदा करना चाहिये। उसी तरीक़े से जैसे कि प्रलय के वक़्त हुई थी। इंन्सान में ज़ात इस तरीक़े से सरायत (घुसी) किये हुए हैं जैसे वह कैफ़ियत जो कुल मण्डल (अगर कुल मण्डल को एक इफ़रादी

(इकाई) शक्ल मान लिया जाय) में पाई जाती है। वही इन्सान में मिलेगी। इस मण्डल में जिसको इफ़रादी शक्ल में कहा है सिमटाव की शक्ल पैदा हो जाने से प्रलय का समां बरपा (छा) हो जाता है। अब अगर इन्सान अपने सिमटाव की सूरत पैदा करे तो उसकी प्रलय का आग़ाज़ (आरम्भ) हो जाता है, यानी ठोसता की हालत से वह अस्ल में जस्त (डुबकी) लगाना शुरू कर देता है। अब इन्सान के लिये सिमटाव की शक्ल क्या हो सकती है? वह यह कि अपने फैलाव की शक्ल को जो जिस्म द्वारा है समेट ले, जिस तरह से भी कि सिमिट सके। सिमटाव हमेशा नींचे से शुरू होता है और फिर रफ़्ता-रफ़्ता ऊपर को बढ़ता जाता है। इसलिए कि उसको ऊपर की तरफ़ जाना है। पस, उस तरफ़ पहुँचने के लिये इन्सान अपना सिमटाव नीचे से शुरू कर तो उसकी शक्ल यही हो जायगी कि पैर और उसके क़रीब का हिस्सा एक हालत में ले आना पड़ेगा और उसको साकित रखना होगा। इसको वह किसी तरीक़े में कर लेवे। आख़िर शक्ल उसकी आसन की हो जायगी। यह चीज़ लाज़मी है इसलिए कि इसने ज़ात में पहुंचने का रास्ता बना दिया है और यह एक ही तरीक़े का बराबर रहना चाहिये। अब यह सवाल है कि एक ही आसन से बैठना क्यों ज़रूरी है? बात यह है कि जिस वक़्त इसका इरादा ज़ात में जाने का हुआ तो इस मख़सूस (सर्वप्रमुख) चीज़ के हासिल करने के लिये जो बात कि उसने शुरू में ली थी उसका ताल्लुक़ उस बड़ी चीज़ से गोया उसने कर लिया। लेहाज़ा यह चीज़ जिसका ताल्लुक़ अस्ल चीज़ से पैदा किया है ज़्यादा मददगार होगी। दूसरे मानों में यहां पर इब्तदाई संस्कार (initiation) का मसला भी सिद्ध होता है।

एक आसन पर सीधे बैठकर सन्ध्या करना इस वजह से और भी ज़माने क़दीम से उसूलन बेहतर माना गया है कि ज़ात की धारें जो उस वक़्त जिज्ञासु को फ़ैज़ पहुँचाती हैं सीधी गिरती है और

और इन्हीं धारों में मुकम्मल फ़ैज को कुव्वत होती हैं। अगर जिज्ञासु तिरछा बैठे या बार-बार अपना आसन बदले तो लाज़मी है कि उन सीधी धारों और उनके अस्ल फ़ैज में गड़बड़ी पैदा हो जाय और सन्ध्या का जो वाक़ई जज़्ब (तल्लीनता) और लुत्फ़ जिज्ञासु को एक आसन पर सीधे बैठने से मिल सकता है उसको मयस्सर न हो सके। रूहानी फ़ैज को क़ायदे से हासिल करने के लिए हमको भी क़ायदा में बैठना चाहिये वरना मुमकिन है कि अस्ल फ़ैज से हम महरुम रहें। मुमकिन है कि लोगों का ख़्याल ऐसा भी हो कि सीधे आसन पर बैठकर ध्यान करने में कुछ झलक अहंकार की रहती है। ऐसा नहीं है। उसूलन बन्दे को मालिकेकुल के सामने इस तरह पर रहना चाहिये जैसे कि एक सिपाही आमतौर पर अपने अफ़सर के सामने परेड पर देखने में आता है। अफ़सर के आते ही अटेन्शन (Attention) की आवाज़ दी जाती है। उस वक़्त सिपाही का फ़र्ज होता है कि सारे जिस्म को सीधा एक हालत में रखे और बराबर अपने अफ़सर की जानिब यकसुई (निरन्तर) से देखता रहे। इससे जिस्म की फुर्ती-सेहत और ताज़गी का इज़हार होता है। ईश्वर के सामने बैठने में भी बन्दे का यही फ़र्ज़ है।

पवित्रता का मस्ला ख़ास कर हिन्दुओं में बहुत आला पैमाने पर रखा गया है। इसकी बिगड़ी हुई शक्ल अब यह हो गई है कि सिर्फ़ ख़्याल ही ख़्याल बाक़ी रह गया है। क़वायद सब भूल गये। सिर्फ़ नहाना याद रह गया। इसकी बुनियाद इस तरह पर पड़ी कि लोगों को ख़्याल पैदा हुआ कि वह पाक और लाज़वाल (अविनाशी) हस्ती जिसमें हमको जाना है हर चीज़ से मुबर्रा (पृथक) और मनज़्ज़ा (अलग) है। उसमें पाकीज़गी ही पाकीज़गी है। गोया हमने अपना पाकीज़गी का म्यार (आदर्श) क़ायम कर लिया है। वह पाकीज़गी कैसी जो मल, विक्षेप और आवरण से पाक है? हमारी हस्ती में यह तीनों बातें मौजूद

हैं। जहाँ पर पाकीज़गी होगी वह चीज इन तीनों चीज़ों से मुबर्रा होगी। हमारा ख्याल इस दर्जे की पाकीज़गी की तरफ़ राग़िब (आकर्षित) हुआ। ज़ाहरा सामान से उसकी नक्ल उतारने लगे। यानी जिस्म को मलने और साफ़ करने लगे। गन्दे मुक़ामात की सफ़ाई का ख़ास ख्याल रखा। फिर क्या हुआ कि वह पाकीज़गी जिसको हमने अपना मयार माना है हमारे ज़ाहरा तरीक़ों से मन पर असर डालने लगी। बढ़ते-बढ़ते यह नौबत आई कि उसमें भी शुद्धता दौड़ने लगी। यह बात हमारी मुतवातिर अर्से तक जारी रही और साथ ही साथ हमारे नुक़्ते निगाह में वह मयार भी क़ायम रहा जिसने उस पाकीज़गी को दोबाला (दुगना) कर दिया। एक तो हमारे कर्म मन की शुद्धी के लिये राग़िब थे। दूसरे, इस मक्सद ने सोने पर सुहागा का काम किया। अब क्या था ? पवित्रता दौड़ने लगी। मन शुद्ध होने लगा। ख्यालात अच्छे पैदा होने लगे और यह सब हमारे अस्ल मक़्सद हासिल करने में मददगार हुए। हमको दोनों तरफ़ से फ़ायदा पहुँचा। बातिनी (अन्दरुनी) दौड़ हम लगा चुके थे। ज़ाहिरी दौड़ से भी हमको इस काम में मदद मिली। गोया दोनों चीज़ें मक़्सद के हासिल करने में मददगार हुईं। जब इन दोनों चीज़ों ने एक दूसरे से हम आहन्गी (एकता) हासिल कर ली तो क्या हुआ कि यह सब मिल मिलाकर बजाते ख़ुद एक ताक़त बन गई। इस ताक़त ने हमारा रास्ता और भी सीधा कर दिया। फिर क्या था ? दोनों बाज़ुवों से हम पैर फैलाकर उड़ने लगे, और, हर चीज़ शुद्ध होने लगी। देखिये इस पवित्रता ने हमको मक़सद हासिल करने में कितनी मदद दी।

हमने अपने नियमों में सन्ध्या और उपासना का सब से अव्वल नियम रखा है। इसकी वजह यह है कि हम ऐसा करने से उस ताक़त को हासिल कर रहे हैं जिस पर कि हमको क़ुदरतन किसी वक़्त आना है। इसके मुतल्लिक़ एक बात और बताता हूँ। वह यह कि जब धारें

ज़ात से रवां हुं तो उन्हीं की रवानी ने मथ-मथाकर ठोसता की हालत पैदा कर दी। अणु-परमाणु और मुख़्तलिफ़ शक्ल के ज़र्रात बनकर तैयार हो गये और इन का इज़हार अपनी-अपनी शक्ल में होने लगा। वह चीज़ इनमें रवां रही जिससे गर्मी भी पैदा हुई जिस पर कि ज़िन्दगी का दारोमदार है। इस सूरत में मुख्तलिफ़ शक्लें ज़हूर (प्रकाश) में आ गईं और मुखतलिफ़ काम होना शुरू हो गये। गर्मी बाक़ी रही और यह अब तक क़ायम है। इसका ज़ोर नीचे की तरफ़ ज़रूर हो गया। लोग सवाल करेगें कि यह ऊपर नीचे का ख़्याल क्या? जिस वक़्त हम सब से ऊँची चीज़ का तस्सुवर (ख़्याल) बांधते हैं तो नीचे का ख्याल भी क़ायम हो जाता है। अलावा इसके, जब हम बेहतर चीज़ से आये हैं तो इसके बादवाली चीज़ कम बेहतर या नीची कही जावेगी। और इस वजह से हम उस चीज़ को सब से बड़ा और ऊँचा तस्सुवर करते हैं यानी बुलन्दी और पस्ती (निचाई) हमारे ज़ेहन में फ़ौरन दाख़िल हो जाती है। मगर जिस वक़्त नीचे का ज़ोर घटता है तो वही चीज़ जो परमाणु पर गर्मी डाल रही है, और यह काम उसका बराबर जारी है, ज़र्रात को ऊपर की तरफ़ मुख़ातिब करने में मददगार होती है। यानी जहाँ पर से यह चीज़ नुमायां (प्रकट) हुई है और उसी हरकत से जो इसमें गर्मी पैदा होती है उसको हल्का कर देती है। हल्की चीज़ का यह ख़ास्सा (स्वभाव) है कि वह हमेशा ऊपर को उठती है। उसका ऊपर आना यह मतलब रखता है कि वह उस तरफ़ को जाना चाहती है जहाँ कि उसका मम्बा (श्रोत) है। अब यह चीज़ जिसमें धारों के असरात से काफ़ी तहरीक (गति) पैदा हो गई है अपने अस्ल की तरफ़ उड़ना चाहती है। यह चीज़ इन्सान के हिस्से में ज्यादातर आई है। इसलिए जब नीचे की रस्सी कट जाती है यानी नीचे का रूझान (झुकाव) बन्द हो जाता है तो अज़ख़ुद (स्वयं) इन्सान के दिल में परवाज़गी (ऊपर उड़ना) और अपने अस्ल में पहुँचने का ख्याल नमूद (दृष्टिगोचर) कर जाता है। यही वजह है कि संध्या उपा-

सना करने को जी चाहने लगता है। इस गर्मी और उस गर्मी में जो सूरज के असर से पैदा होती है बड़ा फ़र्क है। उस गर्मी (सूरजवाली) का आग़ाज़ फिर भी बमुकाबिले इसके मादियत (द्रव्यता) से होता है और इससे भारी होती है। इसका आग़ाज़ अस्ल ही से है जिसमें मादियत नहीं। मेरे ख़्याल में अगर इसको ज़ोर कह लिया जावे तो तरजुमा ज़्यादा मौज़ूं रहेगा। मगर ज़ोर में यह गर्मी छिपी हुई रहती है और आफ़ताब में ज़ाहिर तरीक़ें में। उस गरमी में और इस गर्मी में, जो महज़ कहने मात्र है, ज़मीन व आसमान का फ़र्क है। वह यानी सूरजवाली गरमी महज़ आँच है और यह ज़िन्दगी को बढ़ानेवाली और उसका क़याम रखनेवाली है। अल्फ़ाज़ दोनों जगह एक ही से आये हैं। मगर अफ़सोस यह है कि ऐसी चीज़ जल्दी एहातेबयान (बायन के दायरे) में नहीं आती। जहां तक हो सका ख़्यालात को अल्फ़ाज़ में बांध दिया गया है मगर इसका फ़र्क़ अनुभव पर मुनहसिर है यानी इस गरमी और उस गरमी का फ़र्क़।

हमारे तरीक़े में सब से पहले यही किया जाता है कि अभ्यासी का नीचे की तरफ़ जो रूझान हो रहा है तालीम कुनिन्दा (शिक्षक) अपने असर से कमज़ोर कर देता है ताकि एजज़ा उस तरफ़ यानी ईश्वर की तरफ़ अज़ाख़ुद मायल (ध्यान) होने लगे। यह हालत मन के ऊँचे तबके की है और वह हालत यानी नीचे की तरफ़ रूझान होना मन के नीचे तबक़े की। यह फ़िलस्फ़ा है तालीम का और बुनियाद भी। यह चीज़ जो मैंने यहाँ बयान की है बड़े-बड़े फ़िलासफ़रों को सोचने और ग़ौर करने का मौक़ा देगी। मज़मून मुख़्तसिर लिखा गया है। इस सिलसिले में एक बात और ज़िक्र कर देना ज़रूरी समझता हूँ। वह यह कि एक मौक़े पर किसी बुज़ुर्ग ने फ़रमाया है कि ईश्वर ने बन्दे का दरवाज़ा जिससे हर "क्यों" (प्रश्न) का जवाब उसे मिल सके बन्द कर दिया है। वह दरवाजा क्या है ? सोचने से पता चलता

है, वह परदा क्या है जानने से ताल्लुक़ रखता है। एक शायर ने भी कहा है।

तवाँ दर बलाग़त बसहबाँ रसीद।
नदरकुनह बेचूँ बसुजाँ रसीद ॥[1]

अब इस परदे के बारे में सुनिए। वह क्या चीज़ है जो उसके अस्ल राज़ जानने में हारिज़ (रोक) हो रही है। जिस वक़्त हम ईश्वर का ख्याल बांधते हैं तो हमारी समझ एक दायरा बना लेती है और एक तरीक़े का दर (दरवाजा) क़ायम कर देती है। बस यही बन्द (दायरा) है जो "क्यों" का जवाब नहीं देने देता। अब हम अगर कहीं इस ख्याल से बाज़ आ जायें और वह अहाता हमारे ख्याल से कहीं दूर हो जाये तो हम बारीक से बारीक बात मालूम कर सकते हैं। मगर इस दायरे के बाद एक दायरा और आता है जिसका परतो या अक्स यह दायरा है जो ऊपर बयान किया जा चुका है। जब हम उसमें घुस पड़े तो उस जगह यानी मरकज़ की कैफ़ियत नज़र आ सकती है। मगर इन क़यूद (रुकावटों) का टूटना सिर्फ़ एक हालत में हो सकता है यानी जब हम अपने ज़र्रात को किसी तरीक़े से छिन्न-भिन्न कर सकें। मगर यह ताक़त अम्रेमुहाल (कठिन कार्य) है, इसलिये कि उन क़वायद की पाबन्दी जो इसके लिये लाज़मी है, नहीं हो सकती। अगर कोई शख़्स ऐसा पैदा हो जाय जो अपने कूव्वते इरादी और इच्छा शक्ति से इन ज़र्रात को छिन्न-भिन्न कर सके तो वाक़ई वह दायरा निगाह से हट जावेगा। इसलिए कि निगाह छिन्न-भिन्न हालत

---

१. कोई भी वक्तृत्व कला और प्रभावशाली व्याख्यानों में सहबन (चीन का एक दार्शनिक) की प्रज्ञा को प्राप्त कर सकता हैं परन्तु हर कोई परम पावन परमेश्वर के ज्ञान को प्राप्त करने की क्षमता नहीं रखता।

में उसके साथ हो चुकी है। मगर इसका इल्म या ज्ञान लाने के लिये यह बात भी ज़रूरी है कि वही निस्बत रखते हुए उन एजज़ा को फिर इकट्ठा करके जिस्म की तरतीब उसी तरीक़े से कर लें जो ज़र्रात के छिन्न-भिन्न करने से पहले थी। अवाम की निगाह में ऐसा शख्स मुमकिन है कि न पैदा हुआ हो। मगर मेरा अनुभव शाहिद (गवाह) है कि चंद ऐसी हस्तियाँ ज़रूर गुज़र चुकी हैं। जिस वक़्त ज़र्रात अलाहदा किये जाते हैं तो वह चीज़ जो बाक़ी रह जाती है उसकी कैफ़ियत मख्फ़ी हरकत की हो जाती है जिसमें उसकी क़ूव्वतेइरादी (निश्चयात्मक शक्ति) पोशीदा रहती है। जैसे ज़हूर के पहले और प्रलय के बाद जो चीज़ कि पिनहां (गुप्त) थी फिर ज़हूर का बायस हुई। इसी तरह से जो चीज़ कि ज़र्रात के छिन्न-भिन्न करने के बाद रह जाती है वही फिर ज़र्रात इकट्ठा करने का बायस होती है और इसमें कोई दर बाक़ी नहीं रहता।

उसूल नम्बर-२

पूजा प्रार्थना से शुरू की जावे। प्रार्थना आत्मिक उन्नति के लिये होना चाहिये और इस तरह कि हृदय प्रेम से भर आवे।

प्रार्थना बन्दगी (भक्ति) की दलील (द्योतक) है। इससे ज़ाहिर होता है कि हमने रिश्तए-बन्दगी उस ज़ात पाक से क़ायम कर लिया है। हमने किसी को मालिक माना तो हम उसके बन्द हो गये। बन्दे को बन्दगी से मतलब होता है। भरत जी की मिसाल मुलाहज़ा हो जिन्होंने सेवाय आक़ा (स्वामी) की परसितिश (पूजा) और क़द्र के दूसरी बात को दिल में गुन्जाइश नहीं दी। यह मिसाल है जिसको कि हमें रिश्तए बन्दगी क़ायम करने के लिए निगाह में रखना चाहिये। यही रिश्तए मुहब्बत कहा जा सकता है। यह वह लड़ी है जो शुरू से आख़ीर तक सम्बन्ध जोड़ देती है। तार वर्क़ी (बिजली) का उसूल लोगों को मालूम होगा। बिजली का एक हिस्सा एक सिरे पर होता है और उससे आख़ीर सिरे तक ख़बर पहुँच जाती है। यही हाल बन्दे का समझना चाहिये कि उसने अपनी ताक़त की बिज़ली से मालिक तक ख़बर पहुँचा दी है। वह तार जिसका लगाव बन्दे से मालिक तक हुआ है उसमें अपनी इबादत के असरात से वह

हिस्सा जो मालिक के पास है बन्दे के पास आना शुरू हो जाता है। रफ़्ता-रफ़्ता नौबत इस हद तक पहुँचती है कि हर चीज़ मालिक की बन्दे तक पहुँचने लगी है। शुरू में सिर्फ़ बन्दे ने अपनी ख़बर मालिक तक पहुँचाई थी। क्या अच्छी बात है! बन्दे ने बन्दगी शुरू की, नतीजा यह हुआ कि मालिक ने उससे क़ुर्बत (समीपता) अख़्तयार करना शुरू कर दी। और बढ़े। ज़्यादा गये; हमनशीनी (साथ बैठने) का ख़्याल बन्दे में मौजज़न (पैदा) होने लगा; मुसाहबत (संग) शुरू हो गई; ध्यान नाज़िल (आने) होने लगीं; ख़बर पहुँचने लगी; एहकाम (आदेश) आने लगे; इब्तदाई संस्कार शुरू हो गया। यहाँ तक तो कर लाये। आगे......एक राज़ है। ज़ुबाँ खुलती नहीं। सरासर लोग कहते हैं, बन्दगी ने हमको बन्दा बना दिया। मगर यहाँ पर तनासिब (संबंध) का मसला उलट फेर (Invertendo) फिर आ जाता है.. जिस किसी ने इस उसूल को लिया कमाल तक पहुँच गया। लोगों की निगाह इस फ़िलास्फ़ी पर पहुँची ही नहीं; न यह राज़ अब तक ज़ाहिर हुआ।

अब यह बात क्यों कही गई कि प्रार्थना इस तरीक़े में होना चाहिए कि हृदय प्रेम से उमड़ पड़े। मतलब यह है कि हम इस तक अपने में ख़िला (रिक्तता) पैदा कर लें कि उसकी धारें इसमें ख़ूब उतरने लगें। गोया उसके लिये जगह बना लें जिससे कि इतनी कशिश (खिंचाव) पैदा हो जाय कि ईश्वरी धार हम पर सीधी गिरने लगे।

मए[१] वहदत[२] के तालिब[३] दिल भी कर बहरे तलब[४] ख़ाली।
तही[५] पैमाने[६] पर महफ़िल में सर झुकता है बोतल का।

रफ़्ता-रफ़्ता इस काम की इतनी मज़ावलत (अभ्यास) हो जाती है और ऐसी हालत बन जाती है कि आदमी हम्मातन (पूर्णतया) अपने आपको प्रार्थना ही प्रार्थना महसूस करने लगता है। वह हालत कब पैदा

(१) मदिरा (२) आध्यात्मिकता, भगवान (३) ढूढ़नेवाला (४) इच्छाओं का समुद्र (५) स्थान (६) प्याला।

होती है ? जबकि ऊपर लिखे हुए क़वायद की पूरी मज़ावलत अभ्यासी कर चुकता है और दयालु शक्ति पूरे तौर से मौजेज़न (हिलोरें) होने लगती है। जब यह बात आख़िर हद तक पहुंच जाती है, तब आदमी प्रार्थना की हालत में रहने लगता है। दुनियां के काम काज करते हुए भी उस पर वही कैफ़ियत तारी (भरी) रहने लगती है। दुनियां का कोई काम उसके इस काम में विघ्न नहीं डालता हैं।

नमी गोयम कि अज़् दुनियां जुदा बाश।
बहर कारे कि ख़्वाही बा ख़ुदा बाश ॥

अगर किसी शख़्स ने ऐसी हालत पैदा कर ली है तो इसका मतलब यह है कि वह प्रार्थना की ही हालत में रहे। हर वक़्त रूजू (खिचें) रहने का मन्शा यह है कि उसने अपने मालिक को मालिक और अपने आपको बन्दा समझ लिया है। रिश्तेबन्दग़ी क़ायम हो चुका है। ईश्वर को ईश्वर समझ चुका है और बन्दगी के अस्ल उसूल पर आ चुका है। क्या यह बात हर शख्स को हासिल हो सकती है ? हाँ; मगर काफ़ी मज़ावलत के बाद। जिसकी यह हालत हो चुकी है वह प्रार्थना के दायरे में है। उसको अख़्तयार है कि अपने मालिक के सामने आजिज़ी (नम्रता) के साथ जो चाहे सो कहे देवे। हर शख़्स को प्रार्थना के वक़्त इस शक्ल में आना पड़ता है। तब ही दुआ मुस्तजाव (स्वीकृत) होती है। यह रिश्ते मुहब्बत है जो अपनी हद में क़ायम करके मालिक की हद तक पहुंचाया गया है। यह वह तार है जो अगर एक दफ़ा जुड़ चुका है तो फिर नहीं टूटता। मन्ज़िल बहुत दूर है यह सब जानते हैं। मगर ख़्याल ऐसी चीज़ है कि इसको आसान कर देता है। प्रीतम की याद प्रेमी को उससे क़रीबतर कर देती है। इस रिश्ते की हद नहीं।

---

(१) मैं यह नहीं कहता हूं कि दुनियां से अलग रहो। लेकिन जो काम भी करो ईश्वर के समीप रहो।

जितनी ज़्यादा मुहब्बत या प्रेम पैदा किया जावे उतनी ही उस तरफ़ तरक़्क़ी होती है। यह रिश्ता हम अपने साथ लाये हैं। इसको तरक़्क़ी देना हमारा फ़र्ज़ है। इसको हमें यहां तक बढ़ाना और तरक़्क़ी देना चाहिये कि हम अपने आपको हमेशा उसके क़रीबतर पावें। प्रार्थना की हालत भक्तों की होती है और भक्ति से ही उसमें मज़बूती आती है। यह वह सीढ़ी है जो ज़ात तक पहुंचा देती है। यही सीढ़ियाँ जाने कितनी जुड़-जुड़कर उस हद तक पहुंचाने में मददगार होती हैं। सब मन्ज़िलें (यानी मदारिज़ या दर्जात तरक़्क़ी रूहानियत) अर्थात् आध्यात्मिक उन्नति की अवस्थायें इसके अन्दर हैं। प्रार्थना के लिये कोई ख़ास वक़्त मुक़र्रर नहीं है। जब तबीयत ऐसी बन जाय जैसा कि ऊपर कहा गया है तो प्रार्थना शुरू कर दें और अगर न बने तो बना लें। प्रार्थना हमेशा उस मालिक से करना चाहिए जो वाक़ई मालिक है और मालिक कहलाने के क़ाबिल है। गुलामों से प्रार्थना करना मैं जायज़ नहीं समझता। यानी उन शक्तियों से जो इन्सान के मातहत रखी गई हैं, और इन्सान से ही उनको ताक़त मिलती है। ज़माने के असरात से उनकी हालत मदक़ूक़ (असहाय) की सी है। अपने बड़े हाकिम से बजुज़ ख़ास सूरत के दुनियादारी के मामलात में प्रार्थना करना जेहल (मूर्खता) और नादानी है। प्रार्थना अलबत्ता उस बात के लिये मालिक से करना जायज़ है जिसके लिये उसका हुक्म हो चुका हो। यह बात कमाल इन्सानी शराफ़त के अन्दर आती है और इस बात की दलील है कि हम उसको दिल से अपना मालिक समझ रहे हैं, और अपने आपको उसके आधार पर छोड़ दिया है।

अब सवाल यह है कि प्रार्थना का ढंग दूसरों के फ़ायदे के लिये क्या अख़्तयार करना चाहिये? जवाब यह है कि उनको उसी हालत पर ले आवे जो प्रार्थना करते वक़्त अपनी बनाई गई है। उनको मन्कूश (स्पष्ट) कर दिया जावे कि हम एक आजिज बंन्दे (तुच्छ दास) और

अदना (तुच्छ) भिखारी हैं जो दरगाहे आली (मालिक के द्वार पर) में अपनी हैसियत से रूजू हो रहा है। उसको चाहिये कि जो कुछ भी हो अपने मालिक के सामने सब रख दे और मालिक के मौज (इच्छा) के ताबे (अधीन) हो जावे। यानी अपना सब कुछ मालिक के सुपुर्द कर देवे और अपनी ख़ालिस सूरत अख़्तियार कर ले। सब तरफ़ से सिमिट कर उस तरफ़ हो जावे। इस तरह पर कि दुनियां तीरोतार (अंधेरी) मालूम होने लगे। सब की याद उसी एक की याद में शामिल हो जावे और हर ज़ुबां (रोम-रोम और ज़र्रा-ज़र्रा) से याद ही याद बाक़ी रह जावे। इसको फ़नाये मुतलक (पूर्णतया मिटा देना) कहते हैं। अगर यह हालत इन्सान अपने में पैदा कर ले तो मैं समझता हूँ कि उसको सरापा (सिर से पैर तक) प्रार्थना समझना चाहिये। और इसका हर ख़्याल वही होगा जो मौज मालिक की है। वह कभी उस तरफ़ रूजू न होगा जो ख़िलाफ़ मन्शाय एज़ादी (ईश्वरी) हो और वह वही चाहेगा जो मालिक का हुक्म होगा।

ऐसी प्रार्थना करने के लिये लोगों को तैयार रहना चाहिये। अगर किसी शख्स ने इसको पूरा कर लिया या इस हालत में पेबस्त (स्थित) हो गया तो बताओ फिर उसको क्या करना बाकी रह जाता है? सिवाय उसकी याद के और फिर याद भी कैसो जो कभी न आवे। बड़े-बड़े लोग इस हालत को तरसते चले गये मगर इसका किनारा या छोर न मिला। आज़ू (इच्छा) ही रह गई। क्या यह ऐसी मामूली बात है? वहां क्या है? सुनकर अश अश (महान आश्चर्य) करोगे। वहां पर बे इन्तहा सादगी है जिसमें भन्नाटा (vibration) होते हुये भी ऐसा सकून है जिसको सकून भीं नहीं कह सकते। तेज़ी और उठान तो दर किनार। उजाला कह लो। मगर क्या यह सही है? उजाला न सही, अन्धेरा कहो, तो क्या सही हो जावेगा? हरगिज़ नही। अब क्या है? यह हालत जो शायद किसी को पसन्द नही आवेगी। वह

क्या है जहां पर हर चीज़ का ख़ात्मा होता है। उस जगह पर पहुंचना है जो सबका मुबतदा (श्रोत) और अस्ल है। हक़ीक़त तो यही है। यहीं पर जुमला मदारिज (सभी स्तर) ख़त्म होते हैं। इसके आगे मैं क्या कहूँ...ईश्वर वह वक़्त लावे कि आप सब पर रौशन हो जावे। आमीन (ऐसा ही हो)!

आग़ाज़ (आरंभ) आलम (सृष्टि) से पहले ख़ामोशी ही ख़ामोशी थी। वह चीज़ जब नीचे उतरी तो अपना अस्ल या जौहर साथ लाई। दोनों की हालत लगभग एक ही थी। उस पर ग़िलाफ़ दर ग़िलाफ़ लिपटते गये। इसके करनेवाले आप ही थे। दरिया की मौजों ने समुन्दर बपा (उत्पन्न) कर दिया। बहुत से क़तरे मिलकर दरिया बन गया। अस्ल क्या थी? वही नुक़्ता, जौहर, या अस्ल जो साथ आया? दरिया की बुनियाद क्या थी? चन्द क़तरे पानी जो आबशार (झरना) से गिरा और दरिया बहा दिया। मतलब क्या था? कि उस क़तरे में ग़ैर ज़रूरी क़तरे शामिल हो गये और अस्ल नुक़्ता को छिपाकर महज़ उसकी अक्सी सूरत लेने लगे। यानी उसको मोटा या ठोस कर दिया। कोई शख़्स अगर किसी चीज़ को देखे तो उसकी मोटी शक्ल हमेशा निगाह के सामने आयेगी। अगर मुतवातिर देखता रहे तो एक वक़्त वह आयेगा कि निगाह के सामने से उसकी मोटी शक्ल भी ग़ायब होने लगेगी। सिर्फ़ उसका आकार बाकी रह जायगा और कोशिश की जावे तो यह चीज़ भी ग़ायब होने लगेगी। फिर भी कोशिश करना चाहे तो वह चीज़ भी जाती रहेगी जिसने मिलकर उसको वसी (बड़ा) कर दिया है। वह सब ग़ायब होने लगेगी। और आख़िर में वही चीज़ रह जावेगी जो वहां पर मौजूद है। यह बात कैसे हो सकती है? जब इतना अभ्यास किया जावे कि सिर्फ़ अस्ल चीज़ को जो हमें हिस्से में मिली है निगाह में रखते हुये हम हर काम को अन्जाम दें। वह निगाह जो हमने उस पर क़ायम की है उसको नुक़्ते प्रार्थना समझें। आग़ाज़

इसी को कह सकते हैं। और वह फ़ूवात (व्यर्थ की वस्तुयें) जिनको हमने दूर किया है प्रार्थना की पहली हालत कही जा सकती हैं । लोग ताज्जुब करेंगे कि मैंने इस हालत को आग़ाज़ क्यों कहा है। यह हालत चेतनता की है, जिसको आग़ाज़ कहा गया है । चेतनता हर हिस्से में मौजूद है। मगर यह आला तबके (उच्च श्रेणी) की चेतनता है। इसके बाद के मदारिज मैंने यूं नहीं दिखाये कि इस हालत पर निगाह पहुंचना एक दुश्वार अम्र (कार्य) है। और उसकी आख़िरी हालत निगाह में जम ही नहीं सकती। इस हालत में जाकर ऐक्यता (oneness) भासती है। प्रार्थना इसके बाद से की जाती है। यह तीन मनाज़िल अर्थात् मंज़िलें (या ढ़ाई कह लो क्योंकि इसके बाद पता नही रहता सिर्फ़ ढ़ाई दर्जे तक पता रहता है) समझने के लिये आग़ाज़ और अन्जाम (अन्त) कह लो; दरमियानी सूरत भी इसमें शामिल है। वाक़ई यह मसकन (घर) है जिसको मैंने आग़ाज़ कहा है। पहली हालत प्रार्थना की जो कही गई है लोगों के समझ में न आवेगी। मतलब यह है कि जिस तरह एक बच्चा अलिफ़, बे, से तालीम का आग़ाज़ करता है मगर मक़सद यह होता है कि आगे चलकर उसके ज़रिये बड़ी-बड़ी बातें समझने लगे और मुमकिन है किसी वक़्त वहाँ से आग़ाज़ करे जिसके बाद अस्ल मसायल (समस्या) और दकीक़ (कठिन) बातें शुरू होती हैं। गोया वह मक़सद उसके पेशनज़र है गोकि वह अभी हुरुफ़ तेहज्जी (शब्द रचना) की बन्दिश में ही बंधा हुआ है। उसको अभी ख़्वाह अब्जद ख़्वां (आरम्भ करनेवाला) कह लो ख़्वाह तालीम का इब्तदाई मरहला (वस्तु) समझ लो। ग़र्ज़ कि बमुकाबले उस चीज़ के अभी यह बातें सब फ़ूवात में शामिल हैं। यह पहली हालत सब में मिलेगी। जब कोई शख़्स इसको शुरू करेगा और अगर उसका नुक़्ता वहीं जमेगा तो उसका असर उस मोटी चीज़ पर दौड़ने लगेगा। रफ़्ता रफ़्ता उसकी यह हालत हो जायगी कि बस वही नुक़्ता उसके सामने होगा और उस पर उसकी बैठक या क़याम हो जायगा। यह शुरू की मन्ज़िल

है।जब कोई हिम्मत करके उस नुक़्ते पर पहुंच जाय तो नुक़्ता को बढ़ाता जाय। बढ़ाने का यह मतलब नहीं कि उसको फूंक कर गुब्बारा कर लिया जावे बल्कि यह कि उसमें उस चीज़ या ताक़त का इज़ाफ़ा (जोड़) किया जाय जो उसकी अस्ल है। जब उसमें तरक्की होना शुरू हो जाय और वह मोटी चीज़ जो पहली चीज़ से बहुत हल्की और बारीक़ है लतीफ़ (सूक्ष्म) मालूम होने लगेगी और आख़ोर को वह भी मादूम (ग़ायब) हो जायगी तब समझना चाहिये कि हम उस दायरे में पहुँच चुके हैं जहां किसी चीज़ के वजूद लतीफ़ (सूक्ष्म अस्तित्व) को गुमां (आभास) बाकी रह जाता है।

अस्ल से धार की बहुत सी सूरतें नुमायां हो गईं। ये सब चीज़ें उतरी हुई थीं यानी अपने सरचश्म (श्रोत) से आई थीं। ये सब चीज़ें बेकार नहीं थीं बल्कि यह ताक़तें थीं जिन्होंने मुख़तलिफ़ सूरतों में काम करना शुरू कर दिया। और, इन ताक़तों ने वहां पर अपना वह असर दिखाया जिसकी जहां पर जैसी ज़रूरत थी। यह कुल ताक़तें अपने अस्ल से धार की सूरतों में नुमाया हुईं और अपना-अपना काम दिखाया। बच्चे की हालत सब को मालूम है कि एक वक़्त पर वह हिल भी नहीं सकता था। वह आया। उठने-बैठने, बोलने और दौड़ने लगा। गोया जो चीज़ें कि उसमें मौजूद थीं नशोनुमा (प्रगट) पाने लगी। इन्सान की पूरी जौलानी (क्रियाशीलता) आख़िरकार आ ही गई। उस चीज़ ने जो बच्चे में शुरू में ठूँसी गई थी अब नशो नुमां पाकर जुदागाना सूरत अख़्तयार कर ली। अस्ल क्या थी ? वही एक क़तरा, जो हिस्से में आया। अब उसमें बहुत सी चीज़ें जिनको हमने ग़िलाफ़ दर ग़िलाफ़ कहा है शामिल होती गई। यह कैसे हुआ ? मां की आदत और उसका असर। बाप के ख़्यालात और तरीक़ा तालीम। इसके आगे जो बातें उसमें दूसरों के असर से पैदा हो गईं। इन सब ने बज़ात ख़ुद अपना-अपना फ़ेल शुरू कर दिया और जल्दी असरात क़ायम कर दिये और वह चीज़ें जो

ऐसे क़ायम हुई थी उन्होंने ने भी अपना काम करना शुरू कर दिया। ग़र्जे कि कहां तक कहा जावे फ़ेल दर फ़ेल होते ही चले गये। नौबत, बईजां रसीद (यहाँ तक पहुंची) कि उसको इस हालत में ले आये कि उसको क़तई खबर न रही कि मैं कितने मुख़तलिफ़ अमलों में से होकर गुज़र चुका हूं। अब जो यह सब फ़ेल अमल में आये उन्होंने एक ठोसता की शक्ल अख़तयार कर ली। अब यह चीज़ या हालत हटाये नहीं हटती। अपने में इसको इतना गिरफ़्तार कर लिया या लपेट लिया कि इसको यह ख़बर भी न रही कि क्या हो गया। आगे और गुल खिला। उसने दुनियां देखी। तर्ज़ माशरत (जीविकोपार्जन) का असर पड़ा। चाल ढाल का असर हुआ। गुफ़्त व शुनीद (कहने सुनने) ने असर डाला। वाक़ायत ने रंग जमाया। फ़िक्रों ने कब्ज़ा किया। अब उसकी सूरत कुछ और हो गई। अब आगे सुनिये। यह बातें जो उसमें रंग की शक्ल में आ चुकी थी उन्होंने अपने मुतरावफ़ (आसपास से अनुकूल) ज़र्रात (सामग्री) कशीद (खींचना) करना शुरू कर दिये। उन पर और जिला (कलई) हो गई। ख्याल फ़रमाइये कि क्या शक्ल थी और क्या हो गई। ज़र्रा (क़तरा-बूंद) को ऐसा दबाया कि उसकी रंगत अब नज़र ही नहीं पड़ती। और यही नहीं। वह चीज़ जो अब पूरे तौर से दाख़िल हो गई है और उसको जितना ज़ोरदार आपने बना दिया है और बनाते जा रहे हैं उतना ही तेज़ उसमें अमल होता चला जा रहा है। और जितनी तेज़ी बढ़ती जाती है उतना ही ज़्यादा असर आप क़ुदर्ती ताक़तों से घसीट रहे हैं। जैसे आबशार की हैसियत दरिया बनने से पहले थी कि उसमें चन्द क़तरे पहाड़ से आकर उसके पीछे जमा हो गये थे और टपकते थे। अब इसको कुछ बर्फ़ ने मदद दी और कुछ पानी ने, ग़र्जे कि उसकी तादाद और पानी मेक़दार (मात्रा) बढ़ती ही गई और रफ़्ता रफ़्ता एक परनाला की शक्ल अख़्तयार कर ली। फिर क्या हुआ? आगे और बढ़ा। बढ़कर कुछ पानी इधर-उधर से रसियाने लगा। धार और बढ़ गई। कहीं गढ़े में पहुंची, कहीं उससे ऊपर उभरी, हत्ता

(यहां तक) कि उसमें ख़ुद सोत जारी हो गये। आगे क्या हुआ? पानी का चश्मा जो इधर-उधर जमा होकर इकट्ठा हो गया था उसमें शामिल हो गया। रवानी बढ़ने लगी। और इधर चूंकि शुरू के रफ़िया ने से मैदान और जगह पानी लेने की और वसी हो गई थी अलग़ारों (अत्यधिक) पानी आने लगा। दरिया यहाँ तक बढ़ा कि उसके लिये बड़ा लफ़्ज़ समुन्दर ही हो सकता है। अब उसकी हैसियत क्या हो गई? क्या इब्तदा थी और क्या इन्तहा हुई? वही जो बच्चा की हालत काफ़ी नशोनुमां (पालना पोसना) पाकर हुई थी। यह मौजें जो दरिया में नुमाया हैं इनकी अस्ल और कुछ नहीं। बल्कि नतीजा उन कर्मों का है जिन्होंने रास्ते में मिल मिलाकर उस सूरत के अख़्तयार करने में मदद दी है। यह वही मौजें हैं जिनको आख़िर में लोग मौज या आनन्द तस्सव्वर (ख़्याल) करते हैं। यह आलम इन्सान की ज़िन्दगी में जवानी की हालत में ज़्यादा होता है बल्कि बहुत कुछ लेसपोत हो चुकी है। समुन्दर की हालत वह कही जा सकती है जिस वक़्त इन्सान उस रूप में आ जाता है जिसको बहुत से अफ़ाल (कर्मों) का नतीजा समझना चाहिये। एक सवाल अहम (महत्वपूर्ण) बाक़ी रह जाता है कि चीज़ को देखते-देखते वह चीज़ निगाह के सामने से क्यों हटने लगती है और सिर्फ़ आकार बाक़ी रह जाता है, और फिर वह भी नहीं रहता? वजह यह है कि माद्दे (स्थूल वस्तु) में माद्दे ही को देखने की ताक़त है। उसके बाद उससे बाद वाली ताक़त ही में देखने की ताक़त है। इसी तरह उसके बाद उसके बादवाली ताक़त ग़र्ज़े कि इसी तरह यह बात बराबर चली जायेगी तावक़्ते कि देखने की ताक़त क़तई मादूम (लुप्त) न हो जावे। इसके आगे भी बहुत कुछ बाक़ी रहता है जो एहसास की शक्ल में नुमांया होता रहता है। और उसके बाद वह भी नहीं रहता। और फिर क्या कहूं? रहना भी नहीं रहता। और यह भी नहीं रहता। अब क्या होता है? वही नफ़ी (निषेध) की हालत। वही अस्ल। क्या कोई शख़्स इसके समझने की क़ाबिलियत रखता है?

वही जो उस तक पहुँच चुका है। अब यही गलती है। यूं कहना चाहिये कि जो महज़ नेस्त ही नेस्त में गोताज़न है (शून्य की स्थिति में लय है)। मगर भाई यह नेस्त भी तो कुछ है। अगर है नही तो इसको ऐसा क्यों कहा ? अभी और बढ़ो।

एक सवाल और रह जाता है। धारें उतरते-उतरते मोटी क्यों पड़ गई ? मसला दक़ीक़ (कठिन) है। आदमी किसी ऊंचे पहाड़ की चोटी से कूदने पर अस्नायराह (रास्ते) ही में नीमजां (अधमरा) क्यों हो जाता है ? लोग कहेंगे ज़मीन की कशिश की वजह से। मैं कहूंगा कि जब ऊपर से नीचे का इरादा हुआ तो उसके ख्याल की गर्मी नीचे की तरफ़ मबज़ूल (खिंचे) हो जाती है। गोया यह चीज़ धक्का खाकर उससे निकलना शुरू हो जाती है। इस तरह जब धारें ऊपर से नीचे की तरफ़ रूजू होती हैं तो उसको भी ऐसा ही समझ लेना चाहिये। मोटी चीज़ से मतलब ठोसता से है, और ठोसता उस चीज़ में कही जाती है जिसमें ज़िन्दगी न हो। अब लोग सवाल करेंगे कि भला क़ुदरत की धार और उसमें ज़िन्दगी न हो। यह कैसे हो सकता है ? जवाब यह है कि हर चीज़ क़ुदरत से आई हुई है। नबातात (वनस्पति जगत) हैवानात (प्राणी जगत) और जमादात (खनिज जगत) सब उसी का नमूना है। मगर क्या इन सब चीज़ों में ज़िन्दगी कही जाती है ? हरग़िज़ नहीं। अगर कही भी जाय तो जैसा कि कहा गया है वह एक ख्वाबीदा (सोई हुई) ज़िन्दगी है। यही हाल उस चीज़ का समझ लो। इन्सान अपने आपको अपने कर्मों से उससे निस्बत दे लेता है और उसी से हम-आहनगी (ऐक्य) अख्तयार कर लेता है।

जब हमने यह उसूल क़ायम कर दिया कि प्रार्थना लाज़मी शै (वस्तु) है तो यह भी लाहक़ (आवश्यक) होता है कि अल्फ़ाज़ में प्रार्थना की जावे। चुनाचें बहुत मुख्तसिर प्रार्थना जो मुन्दर्जे ज़ेल (निम्नलिखित)

है अभ्यासी के लिये करना लाज़मी समझता हूँ। और भी कई तरीक़ा से प्रार्थना हो सकती है। मगर मैं इस छोटी सी प्रार्थना को ज़्यादा तर्जीह (प्राथमिकता) देता हूं :—

ऐ मालिक कुल ! तू ही हमारी ज़िन्दगी का मक़सद है।
हमारी ख़्वाहिशात हमारी तरक्क़ी में रख़ना अन्दाज़ हो रही हैं।
तू क़ादिर मुतलक़ और हमारा माबूंद है।
बिला तेरी मदद के तुझ तक हमारी रसाई मुहाल है ॥[1]

आग़ाज़ आलम से पहले हर जगह सकून ही सकून था। जब दुनियां मौजूदा शक्ल में नुमायां हुई तो वह मर्कज़ी नुक़्ता लोगों के दिलों में पूरे तौर से जागज़ीं (प्रविष्ट) हो गया। उस नुक़्ते ने जो बड़ी चीज़ का एक हिस्सा था यह लाहक़ कर दिया कि हम अपने मुरज्जे (श्रोत) असली की तरफ़ रूजू हों। प्रार्थना में हम यही करते हैं। हम उसी मर्कज़ी नुक़्ते पर पहुंचने की कोशिश करते हैं। यह कब मुमकिन है ? सिर्फ़ उस वक़्त जबकि हम अपनी वही हालत बना लें। ऐसी हालत बनाने के लिए मश्क़ करने की ज़रूरत है ताकि हम अस्ल कैफ़ियत तक रसाई (पहुंच) हासिल कर सकें। यह इस तरह से हासिल हो सकती है जबकि हम अपने आपको कुल्लियतन क़ुदरत के मर्ज़ी पर छोड़ दें (जो कि बिलकुल सीधी, सादी और शान्त है)। ज़ाहिरा तौर पर यह

---

१ हे नाथ ! तू ही मनुष्य जीवन का ध्येय है।
हमारी इच्छायें हमारी उन्नति में बाधक हैं॥
तू ही हमारा एक मात्र स्वामी एवं इष्ट है।
बिना तेरी सहायता के तेरी प्राप्ति असंभव है॥

बहुत मुश्किल मालूम होता है। मगर दर अस्ल ऐसा नहीं है। किन के लिये ? सिर्फ़ उनके लिये जो उसमें घुसना चाहते हैं। जब कोई शख़्स अपने अन्दर यह जज़्बा (भाव) पैदा कर लेता है तो वह प्रार्थना की हालत में है। यह हालत हर एक की हो सकती है जो इसका मुतलाशी (ढूंढ़नेवाला) होगा। जो शख़्स एक लमहा (क्षण) भी इस कैफ़ियत पर पहुंच जाता है तो उसकी दुआ मुस्तजाब (स्वीकार) होती है। इसके लिये रोज़ाना मश्क़ की ज़रूरत है।

उसूल नम्बर-३

हर एक भाई को चाहिये कि अपना मक़सद क़ायम कर ले और वह यह कि ईश्वर तक पहुंच कर उसमें लय अवस्था हासिल कर ले मुस्तक़िल क़याम कर ले और जब तक यह बात हासिल न हो जाय चैन न आवे ।

हर शख़्स का फ़र्ज़ है कि जिस चीज़ को हासिल करना है उसका ख़्याल पहले म ज़रूर बांध ले ताकि उसका ख़्याल और कूव्वते इरादी (इच्छा शक्ति) उस तक पहुंचने का रास्ता बना लेवें । देखा गया है कि जिन शख़्सों ने ईश्वरी विषय में उसकी आख़री हालत को मक़सद नहीं बनाया है वह ज़रूर उस आख़री दौलत से महरूम रह गये हैं। इसलिए कि वह दौलत मिलने से पहले जो चीज़ कि उनको अस्नाय राह (मार्ग) में हासिल हुई उसको अस्ल समझ बैठे और वहीं पर रुक गये और उसी को सब कुछ समझ लिया । कहिये मक़सद क़ायम न करने से कितना नुक्स वाक़ै हुआ । दुनियांदारी के मामलात में ग़ौर फ़रमाइये कि जब तक कोई इन्सान अपना मक़सद नहीं रख लेता उसकी

कोशिश इस तरीक़े की नहीं होती और न इतनी जांफिशानी (घोर परिश्रम) से काम होता है जिससे उसको मक़सद बरारी (ध्येय की पूर्ति) में मदद मिले। कहा गया है कि कश्ती में जब तक पतवार न हो उस वक़्त तक उसको वहां नहीं ले जा सकते जहां कि जाना है। अगर हम इस जिस्म को कश्ती समझ लें और उस जगह को जहां कश्ती चलती है दरियाय मारफ़त (आध्यात्मिक) से निस्बत (मान लें) दें तो यह बात लाज़िम हो जाती है कि हम कश्ती में पतवार ज़रूर लगा लें ताकि हम उस बहरे ज़ख्ख़ार (विशाल समुद्र) को जिसको मैंने दरियाय मारफ़त कहा है तै कर सकें। पतवार अस्नायेराह मारफ़त में क्या चीज़ है? यह हमारी क़ुव्वते इरादी है जिससे हम अपना बेड़ा खेकर मन्ज़िलें मक़सूद पर ले जाते हैं। ज़रूर है कि रास्ते में बहुत सी जगह बेशुमार भंवर मिलते हैं। मगर इस क़ुव्वते इरादी और पहुंचने के ख़्याल की मज़बूती से उन भंवरों को पार कर जाते हैं और हमको सही रास्ता मिलता जाता है। अब हमारी निगाह चूंकि मारफ़त पर है लेहाज़ा हम ऐसा मक़सद अपने सामने रखते हैं जो सबसे ऊँचा है और वह मक़सद वही हो सकता है जिसको ज़ाते हक़ीक़त से मन्सूब (संबंधित) करना वाकई ठीक होगा। इन्सान का फ़र्ज़ भी यही है कि उस तक पहुंचने की कोशिश करे। जब तक इन्सान के ख़्याल में यह मक़सद नहीं जमता उस वक़्त तक यह रास्ता तै करना अम्र मुश्किल हो जाता है और मदद ईश्वरी उसी वक़्त शामिल हो जाती है जबकि उसको यानी ज़ात को यह यक़ीन हो जाता है कि वाक़ई हमारा बन्दा हम तक पहुँचने की कोशिश कर रहा है। जब इसके असर से ज़ात में एक तरीक़ की हुबाबी (उभरने-) वाली) खटक पैदा होने लगती है तो गोया आपने अपने ख्याल को उसमें अन्जमाद (जमा) कर दिया। दूसरे मानों में, प्रीतम और प्रेमी की मिसाल पेश नज़र होगी। यानी फ़ासला जो बन्दे का ज़ात तक था अब क़रीब एहसास होने लगा। क़ुर्बत (सामिप्य) यहां तक बढ़ी कि

वह हिस्सा जो ख़्याल में दूरी का एहसास दिलाता था रफ़्ता-रफ़्ता मिटने लगा। होते-होते नौबत यहाँ तक पहुँची कि इस ख़याल को भी भूल गये। वजह यह थी कि क़रीबी की निस्बत और भी क़रीबतर हो गई। यह क़ुर्बत यहाँ तक बढ़ी कि हम उसके बिलकुल क़रीबतर होकर उसमें शामिल होने का एहसास करने लगे। रफ़्ता-रफ़्ता अब हमारे ख़्याल से यह बात भी क़तई क़ाफ़ूर हो गई कि हम वाक़ई उसके क़रीबतर हैं। बात यह थी कि हमने इस क़दर उसकी नज़दीकी हासिल कर ली कि हमारा वहमो गुमां यानी जो ख़्याल अलहदगी का था और उस ख़्याल से अलहदा था अब उससे ऐसा सिमिट गया कि उसकी हालत एक तरीक़ा से मख़फ़ी हरकत की सी हो गई जो प्रलय के वक़्त थी। अब यह ख़ामोश हरकत जो हमने उसमें पैदा कर ली और हर तरीक़ा से उसमें सिमिटने लगे उससे हमारा फैलाव उसमें होने लगा। इस तरीक़े से हमारी लय-अवस्था उसमें होकर इस क़दर देरपा (देर तक ठहरने वाली) और मुस्तक़िल हो गई कि अब हमारा क़याम उसमें मुस्तकिल तौर पर हो गया और हम उस बहरे ज़ख्ख़ार में जिसका ओर छोर नहीं है शैनावरी (तैरने) करने लगे। अब हमको अस्ल ज़िन्दगी मिलने लगी। वह क्या थी? वह असरात समुन्दर के थे जिसमें हम अब तैर रहे हैं। देखिये जब आपने मुस्तक़िल सूरत अपने ख़्याल की ज़ात में लय होने की बांधी थी और इरादा मुस्तकिल बना लिया था तो उसने मदद दे देकर आख़िर मक़सद पर पहुँचा दिया। नतीजा यह हुआ कि आपने अज़ ख़ुद वहां पहुंच कर अपना क़याम पूरी तौर से उसमें जमा लिया। भाई यह बात किस क़दर मुश्किल थी जो महज़ आपके इरादे और सही मक़सद क़ायम करने की वजह से हासिल हुई और कितनी आसानी से आप वहां पहुंच गये जहां जाने का मन्शा था। यह रास्ता कैसे पार हुआ? पहले यह ख़्याल था कि हम उस तक पहुँचे और फिर आप कोशिश और सई बलीग़ (अथक प्रयत्न) उस तक पहुंचने की करने लगे। चूंकि बेहतरीन

मक़सद आपके सामने था और उस पर आपको पहुँचना था इसलिए आप में उस वक़्त तक पहुँचने की दिलचस्पी भी पैदा हो चुकी थी। और जब किसी काम में दिलचस्पी पैदा होती है तो उसके करने के लिये बार-बार तबीयत चाहती है और यह आदत ऐसी बन जाती है कि बग़ैर उसके किये हुए तबीयत को क़रार व चैन भी नहीं मिलता। इसका अभ्यास करते-करते अज़ खुद तबीयत उस तरफ़ और तेज़ होने लगती है। आदत पड़ते-पड़ते मैलानेतबा (आन्तरिक रुझान) यहां तक हो जाता है कि अभ्यासी की तबीयत इस ज़ोर शोर से मायल होने लगती है कि बग़ैर इसके किये उसको कुछ अच्छा भी मालूम नहीं होता जो हालत बढ़ जाने पर बेचैनी के नाम से मन्सूब की जा सकती है। इसमें तड़प भी शामिल है। लेहाज़ा यह बात लाज़िम आई कि उस तक पहुँचने के लिये हमको बेक़रार ज़रूर रहना चाहिये। जिस तरह से जब आग़ाज़े आलम का वक़्त आया तो वह मख़फ़ी हरकत अपने लिये रास्ता बनाने के लिए बेक़रार थी। उसकी बेक़रारी ने उसके लिये रास्ता बना दिया। हमारी बेक़रारी हमारे लिये मक़सद पर पहुँचने का रास्ता बना देगी।

उसूल नम्बर-४

अपना जीवन साधराण बना ले और वह ऐसा हो कि नेचर से मिल जुल जावे।

मज़मून निहायत मुश्किल है जो इस उसूल में रखा गया है। सादगी क़ुदरत की जान है। वह यह परतो (परदा) है जो ज़ात में निहां रहता है। इससे रोइदगी (चाल) और बालीदगी (बढ़ना) अमल में आती है। इसको अगर ज़ात की रूहेरवां (आत्मा) कह लिया जाय तो बेहतर होगा। यह वाक़ई नेचर की जान है। इससे कूद फांद शुरू होती है। यही चीज़ बिलकुल अस्ल है। इसके बाद जो बात आती है वह माया का दायरा है। आमतौर पर लोग इसी दायरे में काम करते हैं और उछल फांद और चड़क भड़क सब इसी की तरह रहती है। गोया यह चीज़ आग़ाज़े आलम का बायस होती है। इस चीज़ को लोग अपने अन्दर नशोनुमां (बढ़ावा) देते जाते हैं। नौबत यहाँ तक आती है कि ऐसी गुत्थियाँ बना लेते हैं जिसके सुलझाने के लिए ख़ास क़ुव्वते इरादी की ज़रूरत पड़ती है। इसमें लोग लिपटलिपटा कर सिमिट सिमटाकर ऐसी नमूद (रूप) अख्तयार कर लेते हैं जो बज़ाहिर इसमें एक ठोसता का निशान नज़र आने लगता है। बेरूनी (बाहरी)

हवा और माहोल (वातावरण) भी उस पर असर डालना शुरू कर देते हैं। उसमें फ़ेल दर फ़ेल नुमायां होने लगते हैं। नतीजा ख़राबी ही होता चला जाता है। इस पर्दे में सादगी का फैलाव छिपता जाता है। यह सब मिल-मिलाकर इन्सान ऐसा जाल बना लेता है कि जिसमें वह ख़ुद बख़ुद फसने लगता है। बल्कि यों कहो कि फंस जाता है।

आग़ाज़े आलम से पहले ख़ामोशी ही ख़ामोशी थी। क्षोभ पैदा हुआ। कायनात (सृष्टि) ज़हूर (प्रकट) में आई। जो चीज़ें कि पैदा हुईं अपनी अस्ल ताक़त का अक्स लाईं और क़रीब-क़रीब जुज़न (थोड़ी-थोड़ी) हर ताक़त मौजूद थी। इनका इस लेहाज़ से वही काम है जो अस्ल का था। क्षोभ के असर से कायनात और उसके क़ायम रखने की ताक़तें ज़हूर पज़ीर (प्रकट) हुईं। दूसरे मानों में एक क़िस्म का मकड़ी के जाल की तरह तांता पुर गया। और हर चीज़ और ज़र्रात जिन्होंने तांता बनाया या लड़ी बनाई ताक़त रखती थी। उसकी शक्ल अब भी वैसी ही है और रहेगी। जब तक कि उसकी वापसी का वक़्त न आ जाय। इन्सान जिस वक़्त पैदा हुआ उसकी हालत ख़्वाबीदा शक्ल में थी। उन एजज़ा में जिनको अपने साथ लाया था उस वक़्त नशोनुमां (विकसित) न थी। होते-होते वह ताक़तें तरक्क़ी करती रहीं और इस हालत में पहुँचा दिया कि वह अज़्ली (ईश्वरी) ख़्याल जो उसके ज़हूर (प्रत्यक्ष करने) में लाने का बुनियादी पहलू था काफ़ी तरक्क़ी कर गया। यही एक चीज़ थी जो ज़ात से पैदा होकर कायनात का बायस हुई और फैलाव और सारा पसारा कर दिखाया। दूसरे मानों में, ताक़तों का लेहाज़ रखते हुए उसकी कुल ताक़त हर चीज़ में हर ज़र्रे में, पूरे तौर से मौजूद हो गई। अगर एक ज़र्रा के बहुत से छोटे-छोटे टुकड़े किये जांय तो उन हज़ारों टुकड़ों में से हर एक में वही ताक़त मिलेगी जो अस्ल ज़र्रे में थी। इस तरीक़े से वह अस्ल चीज़ ख़्याल या क्षोभ जिसका उभार विस्तार रूप में इन्सान में मौजूद

है ऊपर लिखे हुए उसूल के मुताबिक़ वही ताक़त रखती है। मगर चूंकि ज़ात को अपनी शक्ति ऊपर से नीचे मबज़ूल (बदलने का) करने का ख़्याल था यानी बुलन्दो से पस्ती को जो एक दूसरे के मुतज़ाद (विरोधी) हैं लेहाज़ा इस ख़्याल ने जो इन्सान में मौजूद है उसके बर अक्स शक्ल अख़्तयार की। और, इस लेहाज़ से वह अपने में विस्तार इस शक्ल में करने लगा, जैसे कि ज़ात ने अपने मयार (वृत) में की थी। चूंकि जुज़ों ने मुतज़ाद पहलू को अपना अस्ल समझ रखा है। इसलिये उससे वह सूरतें नुमांया होने लगी जो नेचर या क़ुदरत के बरअक्स (विरुद्ध) है और उसी शक्ल का ताँता या जाल वह अपने अन्दर बुनने लगा। उसकी शक्ल भी अब बरअक्स सूरत में वही हो गई जो ज़ात की शक्ल अपने ख़ालिस रूप में है। फ़र्क़ इतना रहा कि वहां ख़ुलूस है और यहां मुतज़ाद हरकत होने की वजह से उसके ख़िलाफ़। काम दोनों ने एक ही किया। ज़ात के पसारे की वापसी उसी वक़्त हो सकती है जब वह मियाद जो ख़्याल के भन्नाटे ने क़ायम कर ली ख़त्म हो जावे। इन्सान की वापसी यानी इन्सान की पैदा कर्दा (की हुई) धारों की वापसी जो तांता या जाल की शक्ल में मौजूद है उस वक़्त हो सकती है जब वह उस भन्नाटे को ख़त्म कर दे जो उसने उन चीज़ों के बनाने में पैदा किया है। यह भन्नाटा जो इन्सान ने पैदा किया है चूंकि ज़ात के बर अक्स सूरत का भन्नाटा है इसलिए उसकी बिगड़ी हुई शक्ल और ठोसता की हालत उसमें मौजूद है। और जो अस्ली भन्नाटा ज़ात के क्षोभ द्वारा पैदा हुआ है उसमें अपने तबके (स्थिति) के लेहाज़ से सूक्ष्म तरीक़े में और अस्ल रूप में भन्नाटा की शक्ल नुमांया है। बस, इन भन्नाटों में यही फ़र्क़ है। इसमें अन्धापन है और उसमें जैसा का तैसा। जो ताक़तें कि अस्ल में मौजूद हैं वही ताक़तें इन्सान में नमोदार हुईं। इसलिए कि इन्सान के ख़्याल में वह ज़र्रात शामिल थे जो ज़ात के क्षोभ के वक़्त मौजूद थे। इसमें चूंकि

अन्धापन था इसलिए उसके मुतज़ाद काम किये। और वह क़ुवा (शक्ति) जो इन्सान में जागजीं (प्रविष्ट) हुये उनका इस्तेमाल बरअक्स होने लगा। इन सबने मिल-मिलाकर उस ताँतें में मदद दी जो इन्सान ने अपने ख़्याल से बनाया था। उसका हर ज़र्रा इसी लेहाज़ से इस क़दर ताक़तवर बन गया जैसा कि ज़ात के ताँतें का था और उसने भी अपने अन्दर एक दुनियां बसा ली। हर क़ुवा इतना ताक़तवर बना कि जवाब देने लगा और एक जाँदार की तरह उसमें हरकत पैदा हो गई। और हर चीज़ में मन और ख़्याल काम करने लगा। जितने आदमी उतने ही ख़्याल शामिल हैं। इस तरह जैसे हर क़ुवा चूंकि ताक़तवर बना दिया गया लेहाज़ा उतने ही ख़्याल उसमें अपने-अपने लेहाज़ से पैदा हो गये। अब कहिये आपने भी क़ुदरत की मानिन्द अपनी एक दुनियां बसा ली। तवाज़न (साम्यावस्था) जाता रहा। जंग व जदल (झगड़ा) शुरू हो गई। एक क़ुवा कह रहा है कि हवा ख़ोरी को चलो। दूसरा कह रहा है कि ठण्ड बहुत है। जुक़ाम हो जाने का अन्देशा है। तीसरे ने एक बात और पेश की। चौथे ने दूसरी बात पेश की। पांचवें को दौलत कमाने की फ़िक्र हुई। छठे ने कहा रोज़गार करो। सातवाँ कहता है इसमें बहुत मेहनत पड़ेगी। आठवाँ कहता है कि किसी मालदार अज़ीज़ से या रिश्तेदार से दोस्ती करो और उसका दिल हाथ में लो ताकि वह सारी दौलत तुम्हें दे दे। एक और क़ुवा जवाब देता है कि भाई यह सब बेसूद है जब तक कि शादी न हो जाय और बाल बच्चे न पैदा हों तब तक यह कोशिश बेकार है इसलिए कि उनका फ़ायदा उठानेवाले तो पहले मौजूद हों। अब फ़िक्र शादी की हो गई। बच्चे भी हो गये। इनको सिखाने पढ़ाने की फ़िक्र हुई। बड़े हो गये। कभी तमाशे की सूझी। फ़लां थियेटर में जमीला अच्छा पार्ट खेल रही है। चुनांचे देखने की ख़्वाहिश हुई। वहां गये, तमाशा देखा। चार छः रोज़ मुतवातिर देखा। जमीला के हरकात व सकनात (हावभाव) ने बार-बार तमाशा देखने को मजबूर किया। अब वह बात इतनी भाई

कि उसके हरकात व सकनात (हावभाव) और इशारों ने उस क़ुवा में और हरकत दे दी जिसको इन्सान पहले नशोनुमा ले चुका है। हर बात जमीला को भाने लगी। जब पसन्द आई तो उससे मुहब्बत का आग़ाज़ हो गया। अब इसी फ़िक्र में घुल रहे हैं और उस हालत और ख़्याल को और मज़बूत कर रहे हैं। और उस ख़्याल के लिये आदत भी बनती जा रही है। तांता में इज़ाफ़ा भी हो रहा है। आदत बिगड़ रही है और इस आदत का यह असर हो रहा है कि उसके मुतरावफ़ (प्रकार की) हर चीज़ जमीला मालूम हो रही है और उस पर वही ख़्याल असर कर रहा है। अब फ़िक्र इस बात की हुई कि उसके सेरी (पूर्ति) बिला दौलत के नहीं हो सकती। मगर उनको जमीला के ख़्याल से फ़ुर्सत कहाँ कि वह मेहनत से रुपया पैसा पैदा करें। चुनाचें यह फ़िक्र हुई कि कहीं किसी की रक़म मारो। साथ ही यह ख़्याल पैदा हुआ कि इस तरह मुमकिन है कि जेल की नौबत आ जाय। मुक़दमा बाज़ी शुरू हो जाय। इसलिये झिझके। मगर जमीला के ख़्याल ने और इस तरह के और ख़्यालात ने जो उसने बाद में बनाये उसको इस क़दर पावजोलां (प्रोत्साहित) और मजबूर कर दिया कि आख़िर चोरी पर आमादा हुआ और हराम की कमाई पर तैयार हुआ। क्या था? क्या हो गया? उसके ख़्यालात ने उसको कैसी मदद दी? क्या ढंग अख़्तयार किया और कैसे उसको जकड़ दिया? यह मोटी-मोटी मिसालें हैं जिन्होंने उस तांता में मोटी-मोटी कड़ी पैदा कर दी। और इन ख़्यालात को तलातुम (संघर्ष) से गर्मी पैदा होने लगी। इस गर्मी ने सेंक का काम किया जिससे उनमें और भी मज़बूती आ गई। ठोसता बढ़ती गई। जाल और मज़बूत होता गया। अब उसने जिस डोरी में अपने आपको जोड़ा था उससे नई-नई बातें तरश्शो (टपकने) होने लगी। कहीं पर फिर गर्मी ग़ुस्सा की शक्ल में नमोदार होने लगी। कहीं पर नफ़्स अम्मारा (काम वासना) की ख़्वाहिशों में इज़ाफ़ा

(बढ़ावा) होने लगा। कहीं पर ऐसी बातें पैदा हो गईं कि जिससे उन क़ुवा की पैरवी में मदद मिली। ग़र्ज़े कि कहाँ तक कहा जाय? मुख़्तसिर यह कि माजूने मुरक्कब (मिश्रण) तैयार हो गयी। अब इनकी वापसी की तरकीब यह हो सकती है कि जो असरात अपने अन्दर लिये हैं उनको फेंकता या निकालता चले और इब्तदाई हालत को उसमें जगह दे। ख्याल को मज़बूत बनाये और इसको औंधेंपन से हटाये। रुख़ को फेरकर ऊपर की तरफ रुख़ कर दे। ऊपर की करना चूंकि अब अपनी ताक़त से बाहर हो गया है इसलिए अपने आप को किसी ऐसे बुज़ुर्ग हस्ती से रूजू करे जिसका ख़्याल ऊपर की तरफ़ मुस्तहकम (पक्का) हो गया हो ऐसा कि उसमें वज़ात ख़ुद यह क़ुदरत (स्वभाव) न रही हो कि वह उसको नीचे की तरफ़ कर सके। चूंकि ख्याल में उल्टापन और औंधापन मौजूद है जिसके मानी यह है कि उसने पस्ती (नीचे) में आकर कसीफ़ (स्थूल) सूरत अख़्तयार कर ली है। इसलिए जब ऐसा शख़्स ऊपर जाने का इरादा करे तो अपने हमजिन्स (सजातीय) से अगर मुहब्बत और ख़्याल का लगाव पैदा करे तो ख़्याल को भी हम जिन्सियत की वजह से मदद मिलेगी और उसको ख़्याली अन्सर (मानसिक विचार) ऐसे ख़िलाफ़ न मिलेंगे जो बे तरतीबी पैदा कर सकें। साथ ही साथ ऐसे आदात भी बनाना चाहिए जो इस जाल को उखड़ने और तितर-बितर करने में मददगार होती रहे। कान को चाहिये कि नेक बात सुने। आँखों को चाहिये कि नेक बात देखें। दिल को चाहिये कि वह नेक काम करने पर आमादा रहे। ऐसी बहुत सी बातें हैं जो करने से ख़ुद ब ख़ुद मालूम होती रहेगी। अलावा इसके इस जाल को ख़ुद ब ख़ुद तोड़ने की कोशिश करें। हर मन्ज़िल पर इसके तोड़ने के मुख़्तलिफ़ ध्यान और मराक़बे (तरीके) हो सकते हैं। इरादा साथ ही साथ यह ज़रूर करे कि इसको तोड़कर रहूंगा, और कोशिश में लग जावे। मुख़्तलिफ़ चक्रों में मुख़्तलिफ़ गुत्थियां इस जाल में लग गई हैं, और लगती रही हैं। इसमें किसी ऐसे शख़्स का

सम्बन्ध बहुत मदद दे सकता है जिसने अपने जाल के बन्द तोड़ दिये हों ।

इस फ़िलस्फ़ा पर निहायत होशमन्दी से ग़ौर करना चाहिये । यह राज़हाय सरबस्ता (गहन भेद) हैं जो खोले जा रहे हैं । इसलिए कि इन पर ग़ौर करके अमल किया जावे । इस मज़मून के बाद मेरा यह मारूज़ा (प्रार्थना) है कि उस जाल को जो आपने ख़ुद बुना है तोड़कर उस ताक़त को जो क़ुदरत की जान है और जो मख़्फ़ी (गोपनीय) सूरत में मौजूद है आपको फिर अपनाना चाहिये और सादगी की मिसाल को जो ग़ौर करने पर ख़िला (शून्य) में हर शख़्स के पेश नज़्र हो सकती है अपना मक़सद मानकर हमको मन्ज़िल तक पहुँचने की कोशिश करना चाहिये । इस तरह पर कि जुमला क़ुवा मुदरिका (विचार) व महसूसा (अनुभव) वग़ैरा सब उसमें लय व फ़ना हो जाँय और उनकी कैफ़ियत अपने पहले के लिये हुये असरात ज़ायल (नष्ट) करके बिलकुल ऐसी हो जाय कि आपकी हालत उससे मिल जुल जाय । तब समझिये कि आपने अपने आप को उस तरफ़ राग़िब (झुका) कर दिया है । तरीक़ा यही हो सकता है जो ऊपर बयान किया जा चुका है । यानी उछल फाँद और चड़क भड़क कम करता चले । उन चीज़ों को जो अपने में शामिल हो गई है ठेस देता चले ताकि वह जाल जो आपने ही बुना है टूट जावे, और, आप वह निखरी हुई हालत जिस पर आप को जाना है सही तौर पर मज़ाहरा (देख सके) कर सकें । यह बात उस वक़्त हासिल हो सकती है जब आप, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, किसी ऐसे शख़्स की सोहबत अख़्तियार करें जो अपना जाल तोड़कर उसमें काफ़ी तौर पर पैर चुका हो ।

उसूल नम्बर-५

हमेशा सच बोले और हर मुसीबत को मालिक की तरफ़ से अपनी भलाई के लिए समझे और उसका धन्यवाद दे।

सच बोलने के मानी दर हक़ीकत यह है कि अपने आपको जैसे का तैसा ज़ाहिर करे। यह वह हालत है और वह कैफ़ियत जिस पर पहुँच कर आदमी बे अख़्तयार यही कहने लगता है "जो है सो है"। कोई अल्फ़ाज़ किसी तरह पर इस हालत का तर्जुमा नहीं कर सकते। यह वह कैफ़ियत है जो वाक़ई अस्ल ही अस्ल है। इसको वाक़ई तौर पर कैफ़ियत के नाम से मन्सूबा (पुकारना) करना भी इस हालत में एक तरह का बट्टा लगाना है। अब हमने जो लफ़्ज़ हालत इस्तेमाल किया है वाक़ई यह भी नहीं है। यह दर हक़ीक़त वह नुक़्ता है जहाँ पर कि कुल ताक़तें सिमिट सिमिटाकर प्रलय के वक़्त जमा हो जाती हैं और अस्लियत ही अस्लियत बाक़ी रह जाती है। अब लफ़्ज़ा अस्लियत जो मैंने इस्तेमाल किया है वाक़ई यह भी उसका सही तर्जुमा नहीं है। यहाँ पर जुमला एहसासात कुल्लियतन ख़त्म हो जाते हैं। अगर हम इसको ताक़त कहें तो भी एक तरीक़े का माहियत का परदा हम इस पर डाल देते हैं। अब क्या कहा जावे? कहना भी मादूम (निरर्थक) है। अब अगर इसके लिये लफ़्ज़ अदम (शून्यता) इस्तेमाल करते हैं

तो भी इसमें एक तरह का गुमान या वहम किसी पर्दे का होता है। खैर अब क्या कहें ? अब एक लफ्ज़ हस्त (वह है) रह जाता है जिससे मुमकिन है कि हम इसका इज़हार कर सकें। अगर हम इसका ख़्याल बांधते हैं तो भी किसी चीज़ का उसके आख़िर में गुमाँ होने लगता है और फिर वही मादियत का एहसास शुरू हो जाता है। अगर हम इन दोनों चीजों को ग़ायब करके उस तरफ़ ख़्याल दौड़ायें तो भी कुछ न कुछ बाक़ी रहता है। अब फ़रमाइये क्या कहा जाय ? अब कुछ नहीं मिलता जिससे उसको साफ़ किया जा सके। बस यही कहना पड़ता है "जो है सो है।" इस चीज़ की नक़ल बस यही मानकर हो सकती है कि सब कुछ होकर आख़िर में मानना ख़त्म कर दिया जाय। यह अभ्यास पर मुबनी (निर्भर) है कि वह सत ब्योहार से अपने आपको उस तरफ़ ले आवे। थिरता की हालत इस काम में मदद देगी। मगर यह थिरता मन्ज़िल पर पहुँचने से पहले ही ख़त्म होना चाहिये। तब अस्लियत का भास (एहसास) हो सकता है। और, भास होना भी ख़त्म हो जाय तब कहीं समझिये कि अब इसकी इब्तदाई हालत पर पहुँचते हैं। हम सच बोलने की आदत इस वजह से बनाते हैं कि वह बात जो ऊपर बयान की गई है उससे हम चिमट कर वैसा ही ब्योहार करने लगे जिसके होने से क़ुदरत ने अपने ब्योहार शुरू कर दिये हैं। अब भक्ति का रंग शुरू होता है जिससे बन्दे को बन्दगी का एहसास होना शुरू हो जाता है। मालिक का ख़्याल वन्दे पर मनक़ूश (छाप पड़ने) होने लगता है। यार की सख़्ती भी प्रेमी को भाती है। और उसमें भी ऐसी लोच महसूस होती है और मुहब्बत टपकती है कि उसमें उसका जी खुश रहता है। जो झिड़कियाँ उसको यार की तरफ़ से मिलती हैं वह बहुत अच्छी लगती हैं। इसमें भी खुशी पैदा होती है। झिड़कियों की अगर भद्दी शक्ल ली जावे तो उनकी एक तरह की मुहीब (डरावनी) शक्ल बन जावेगी। इसको लोग मुसीबत के नाम से मन्सूब करने लगते हैं। यह चीज़ जो ठोसता

की हालत में आई है वह भी इस आसानी से गवारह (सही जाती) होती है कि उसका गिराव जो दिल पर होता है एक गुना फ़रहत (थोड़ी प्रसन्नता) बख़्शने लगता है। जब यह हालत पैदा होती है तो वह जज़बा जो उसमें शामिल होता है उसको धन्यवाद या शुक्रिया की हालत कह सकते हैं। यानी उसने उस चीज़ का कितने अच्छे तरीक़े से खैर मक़दम (स्वागत) किया और अब उसी हाल में ख़ुश है। इसलिए कि यह सब चीज़ें उसके प्रीतम की तरफ़ से आई हुई है—

शेर : मकुन ज़े गुस्सा शिकायत कि दर तरीक़ अदब
बराहते न रसीद आँकि ज़हमते न कशीद[१]

इसका अन्जाम ख़ुशी ही ख़ुशी है। और वह दायरा ख़ुशी में घसिटने लगता है। जब इस दायरे में उसकी काफ़ी मज़ावलत (घुसपैठ) हो जाती है तो यह ख़ुशी उसकी जबल्लत (स्वभाव) हो जाती है और इसका एहसास उसके गुमां में आना भी बन्द हो जाता है। होते-होते यह बात ऐसी हो जाती है गोया उसकी चड़क भड़क भी उस दायरे में पैदा नहीं होती। जब यह हालत पैदा हो गई तो फिर क्या है? उस दायरे में अपना पैराव शुरू हो जाता है जो ही अस्ल है। आगे चलकर तैराक़ी का गुमाँन जाता रहता है। उसकी वह ताक़त जो सहनशीलता से पैदा हुई है इस काम में मदद देने लगती है, और, उस दायरे में जिसकी इन्तहा बयान की जा चुकी है दाख़िल हो जाता है और आगे जो कुछ होता है उसका ज़िक्र काफ़ी हो चुका है। प्रीतम को प्रेमी की झिड़कियां बहुत अच्छी मालूम होती हैं और उसको उनसे एक तरीक़े की गुदगुदाहट पैदा होती है। यह मन्ज़िल हमारे यहां अभ्यासियों को अक्सर होती है और लुत्फ़ भी हासिल होता है और वह उसको पसन्द

(१) परमात्मा के मार्ग पर विपत्तियों के प्रति क्षोभ न व्यक्त करो क्योंकि बिना कष्ट उठाये किसी ने भी सुख नहीं प्राप्त किया।

करने लगता है। इसका नतीजा यह होता है कि ऊपर लिखे हुए दायरे में वह दाख़िल हो जाता है। अब यह चीज़ किस क़दर भलाई के लिए थी जो उसके लिये ऊपर से आई हुई थी। जब इस दायरे से आगे बढ़ता है और सकूने क़ल्बी (आन्तरिक शान्ति) नसीब होने लगता है तब उसको एहसास होने लगता है कि यह सब बातें उसकी भलाई के लिए आई हुई थीं जो मुसीबत और झिड़कियों की शक्ल में नमोदार हुईं। ग़ौर कीजिये यह किस क़दर क़ीमती चीज़ें थीं जो अतिया (उपहार) की शक्ल कही जा सकती है। बस इन चीज़ों पर ख़ुश होकर बेअख़्तियार ऐसे अल्फ़ाज क्यों न निकल जावें जिसको आमतौर पर लोग धन्यवाद या शुक्रिया की शक्ल में ज़ाहिर करते हैं।

उसूल नम्बर-६

कुल जगत को अपना भाई समझे और सबके साथ ऐसा ही ब्यवहार करे।

कमालेशराफ़त इन्सानी यह है कि बन्दा हमेशा बन्दगी के दायरे में रहे। जो चीज़ अपनी अस्ल से आई हुई है उसको ऐसा ही समझे गोया एक मुम्बा से (श्रोत) सब रवां है। जब यह हालत है तो उसकी शक्ल ऐसी हो जाती है जैसा बच्चा वत्ने मादर (पेट) में परवरिश पाकर बरामद होता है। जितने भाई और बहनें एक ही मां के पेट से पैदा होते हैं सबका एक दूसरे से यही ताल्लुक़ और रिश्ता रहता है, और, सब उसमें बंधे हुए हैं। अब इस दायरे से जो अशिया (वस्तुयें) मुख्तलिफ़ रूप में बरामद हुए हैं उनका यही रिश्ता समझना चाहिये जो अपने भाइयों का है जो एक मां के पेट से बरामद हुए हैं। इसमें जो नुक़्ता है किसी के समझ में नहीं आया। वह मर्कज़ जिसके गिर्द हरकत होने से सब कुछ बरामद हो जाता है और सब मिलमिलाकर काम करना शुरू कर देते हैं सब की निस्बत उसी अस्ल से रहती है। ग़ैरियत (पृथकता) का ताल्लुक़ वाक़ई नहीं है। यह अपना पसारा है कि यार अग़ियार (शत्रु) मालूम होते हैं। यह सब अपनी ही ख़ुदगर्ज़ी की हालत है जो सब में पैवस्त (घुस) होकर उन सब को ग़ैर तसव्वर (विचार) करा देती है। इस चीज़ को तोड़ने की ज़रूरत है इसलिए

कि अस्ल बिरादराना ताल्लुक़ महसूस होने लगे। यह भी एक परदा है जो बन्दा (मानव) में हायल (पड़ा) रहता है। जैसे कुन्बा बढ़ने पर उसके अफ़राद (भाग) दूर मालूम होने लगते हैं इसी तरह से ज़माना गुज़रने पर अपने भाई बन्धु दूर महसूस होने लगे। वह हालत जो सब में पैबस्त थी ख़्याल के दायरे से ओझल मालूम होने लगी। महज़ उसकी ठोसता का रूप निगाह के सामने रहा। इसी से हमने मुहब्बत शुरू कर दी। उस चीज़ की तरफ़ से जो अस्ल थी और सबमें मौजूद थी हमने अपनी निगाह हटा ली। इस चीज़ के असर से जो नमूना पैदा हुआ बस वही निगाह के सामने बाक़ी रह गया। इससे जो कुछ मुहब्बत हम कर सके करते रहे। मगर जहां पर मुहब्बत हो गई उसके अन्दर दुश्मनी का राज़ भी छिपा होगा। ख़्यालात की धारें ऐसी जागजों हुई कि मुख़्तलिफ़ तरीक़ों में उन्होंने अपना असर जमाया। कहीं पर कुछ बात पैदा हो गई और कहीं पर कुछ और नक्शा जम गया। हर चीज़ मुख़तलिफ़ हो गई। इन्तशार (विभिन्नता) पैदा हो गया। अब इसने हमको एक दूसरे से अलाहदा कर दिया। यह सब शक्लें एक तरह से जाल का नमूना अफ़रादी (भिन्न) शक्ल में बन गई जिससे उन धारों को जो एहसास की शक्ल में हरजन वो इन्स (व्यक्ति) में नुमायां हो रही थी निगाह से ओझल कर दिया। अब भाई को भाई समझने की मश्क़ करना गोया उस जाल को जो फ़र्दन-फ़र्दन बनाया गया तोड़ देना है; और इस चीज़ को जो भाई बहिन के ताल्लुक़ का एहसास दिला रहा है अपने क़रीब कर लेना है। इसी अभ्यास से भ्रातृ-भाव भासने लगेगा जिसका नतीजा यह होगा कि हम उसके क़रीबतर दिखाई पड़ेंगे। इसकी मज़ावलत (सामिप्य) हमको इल्म हक़ीकी हासिल करने में मदद देगी। और वही चीज़ जो है सामने रह जायगी। जब यह बात बिलकुल सामने रहेगी-तो ज़रूर आपस में मेल-जोल, संगठन वगैरहः की नौबत आ जावेगी। ज़्यादा बढ़ने पर इसी ताल्लुक़ में हमारे ब्यवहार भी ऐसे ही ज़रूर होने लगेंगे कि हम

उस मेल मिलाप की हवा महसूस करेंगे, और, हमको एक दूसरे से तसक़ीन और शान्ति मिलती रहेगी। कितना अच्छा हो अगर हमारे ब्योहार संभल जावें। एक चीज़ तो हमें यों मिल गई। दूसरी चीज़ की फ़िक्र है। वह चीज़ भी मिलना इससे आसान हो जाती है। दुनियां दरहक़ीक़त उक्वा का अक्स (परलोक का प्रतिबिम्ब) है। अगर हमने इस अक्स को संभाल लिया तो फिर अक्स डालने वाली शै (वस्तु) पर भी उसका असर पड़ेगा। और जब संभली हुई चीज़ का असर अपनी अक्स डालनेवाली चीज़ पर पड़ेगा तो उसमें भी शुद्धता पैदा होने लगेगी और हमारा मामला और भी आसान नज़र आने लगेगा। इससे हमको एक गुना उस चीज़ के हासिल करने में मदद मिलेगी। हमारे काम जब यहां के दुरुस्त हो गये तो इसका असर वहां भी पड़ेगा। अक्स डालनेवाली चीज़ से मेरा मतलब ब्रह्माण्ड या आलम कुबरा से है जहां पर हर चीज़ पहले आती है। इसके बाद उसका ज़हूर यहाँ इस दुनियाँ में होता है। कुबरा में चीज़ें उससे ऊपर के हिस्से से आती हैं और यह तरतीब बराबर ऊपर तक चली गई है। लेहाज़ा अगर हम आख़िरी तह को दुरुस्त कर लेते हैं तो उसका असर अक्स डालनेवाली चीज़ पर पड़ता है और वह चीज़ शुद्ध होने लगती है। अब जिसका असर उस डालनेवाली चीज़ पर गिर रहा है उसको भी शुद्ध होने में हम इस तरह से इमदाद करते हैं। और यह सिलसिला बराबर चला जाता है हत्ता कि वह इब्तदाई तह भी इस तरीक़े में शुद्ध हो जाती है। कहिये हमारा मामला किस क़दर सहल से बनता चला जाता है !

उसूल नम्बर-७

अगर किसी से कोई तकलीफ़ पहुँचे तो उसका एवज़ लेने का ख्वाहां न हो बल्कि मालिक की तरफ़ से समझे और उसका शुक्रिया अदा करे।

दुनियां के सब मज़ाहिब बिलइत्तिफ़ाक़ (एक मत से) कह रहे हैं कि जो कुछ होता है अपने कर्मों का नतीजा है। इसके ख़िलाफ़ ईज़ा (हानि) किसी को पहुँच ही नहीं सकती। जब यह बात है तो फिर हम क्यों न समझ लें कि दरहक़ीकत यह इस तरह पर हमारी बनाई हुई क़िस्मत का क़रिश्मा है। हमने अपनी क़िस्मत ख़ुद बनाई थी। वह कैसे बनी ? इसका हल यह है कि जो काम हम किसी तरीक़े से दिल और दिमाग़ लगाकर करते हैं तो हम इस अस्ल चीज़ में जो कि इन सब चीज़ों के आने की बुनियाद है नक़्श बना लेते हैं और वह चीज बीज रूप में उस वक़्त तक मौजूद रहती है जब तक भोग कर हम उसके नक़्श मिटा न दें। उसका भोगना लाज़िम है। क़ुदरत का नियम है कि वह चीज़ ऐसी ही साफ़ शफ़्फ़ाफ़ (स्वच्छ) रखना चाहती है जैसी कि इब्तदा में आई है। इस पर ज़रा भी ग़ुबार पड़ जाने से इसकी चमक दमक मन्द पड़ जाती है। ताक़त और क़ुव्वत होने की वजह से ख़ुद यह एक तरह की ज़िन्दगी अख़्तियार कर लेती

है और इसकी निस्बत कर्म के लेहाज़ से हो जाती है और यह इस वजह से कि हमने अपने आपको कार्य करनेवाला समझ लिया है। इसी ख़्याल के ज़ोर ने उसमें नक़्श बना दिये हैं। जब यह सामान काफ़ी तौर पर मुहय्या हो चुकता है और उसमें काफ़ी बल पड़ चुकते हैं इसमें ख़्याल की गर्मी भी शामिल होती है जिसकी वजह से इसमें चेतनता और भी बढ़ जाती है। चेतनता बढ़ने की वजह से उनमें एक तरह का उबाल शुरू हो जाता है। क़ानून क़ुदरत है कि जो चीज़ जहां से आती है उसी जगह पर वापस होने की कोशिश करती है और उसी तरफ़ को उसके जाने का रुझान हो जाता है जहाँ से कि आई है। अब उस चीज़ में गर्मी लग-लगकर यह हालत पैदा हो गई है कि वह उस भारीपन को बर्दाश्त नहीं कर सकती। पस लाज़िम है कि वह अपने आपको ख़ाली करने की ग़रज से उस जगह पर जावे जहां से कि आई है। छोटी चीज़ में से जब कोई चीज़ बरामद होती है और उसको जब काफ़ी मैदान मिलता है तो उसका भी फैलाव वसी हो जाता है। अब यह फैलाव जो हुआ है जसामत (देहपन) की वजह से काफ़ी ज़ोरदार होता है। जब जसामत पैदा हो जाती है तो उसमें ज़ोर भी उसी लेहाज़ से पैदा हो जाता है। क्योंकि आनेवाली चीज़ में क़ुव्वत भी शामिल होती है। जब यह हाल हो गया तो उसकी शक्ल अब दूसरे क़िस्म की हो जाती है। जहां पर जो जगह है उन्हीं में वह समाने की कोशिश करती है, और, उन पर्दों पर अपना असर डालती है जो भोग के लिए मख़सूस (निश्चित) है। बस तकलीफ़ शुरू हो जाती है। इस चीज़ को मैंने बहुत मुख़्तसिर बयान किया है वरना हर ख़्याल की सूरत जुदागाना दिखाई जा सकती है। ऐसी शक्लें पैदा होने लगती हैं ख़्वाह अंदर पैदा हो जाय ख़्वाह बाहर से उनको मदद मिले मतलब सबका यही होता है कि वह चीज़ किसी तरह से साफ़ हो जाय। बेरुनी मदद जो अपने कर्मों के भोगने से मिलती है उसको लोग दूसरे की तरफ़ से ईज़ारसानी (हानि पहुँचाना)

का ख़्याल बाँधते हैं और नावाकफ़ियत की वजह से जिस बेरुनी चीज़ से उनको भोग में मदद मिलती है अपना ख़्याल उस जानिब से ख़राब कर लेते हैं। यह बात बिलकुल बेजा है इसलिए कि दरहक़ीक़त उसने उस चीज़ को साफ़ करने में मदद दी। गोया उसने एकगुना एहसान किया। जब यह बात है तो वाक़ई तौर पर उसी बेरुनी ताक़त ने किसी के ज़रिये जो काम किया है उसने आपको साफ़ होने में बहुत मदद दी। दूसरे मानी में उसने एक दोस्त का काम किया है। अब चूँकि आमतौर पर इस हद तक ख़्याल नहीं पहुँचता और न इस फ़िलस्फ़ा पर कोई ग़ौर करता है इसलिए यही कह दिया गया है कि उस चीज़ को अपने मालिक की तरफ़ से समझे ताकि दिल में दुश्मनी का ख़्याल पैदा न होने पावे और शराफ़त से किसी हाल में गिर न जावे। जो चीज़ कि बेहतरी के लिए किसी शख़्स के ज़रिये से आई है दिल बे अख़्तियार उससे ख़ुश हो जाता है बल्कि यही हालत शुक्रिया की कही जा सकती है।

उसूल नम्बर-८

भोजन करने के वक़्त जो कुछ मिल जावे ख़ुशी से खावे और ईश्वर की याद में भोजन करे। शुद्ध और पवित्र कमाई का ख्याल रखे।

यह एक बहुत बड़ा फ़िलस्फ़ा है जिसका आग़ाज़ जिसमानियत से होता है और इसकी इन्तहा वही है जहाँ हम सब को पहुँचना है। ख़ुश रहना यह एक ऐसा समां (दशा) है जिसका असर उसके नीचे छनना शुरू हो जाता है। और इससे सब चीजें शुद्ध हो जाती हैं। यह वह हालत है जिसको दरहक़ीकत अगर हम ज़ात के बाद वाली हालत कह लें तो तर्जुमा मुनासिब रहेगा। इसका ख्याल बांधने से गोया हम उसका ख्याल बांध रहे हैं जो हमारी आख़िरी मन्ज़िल है। गोया इब्तदा हमने उस बड़ी हालत से की जिसके बाद बस वही रह जाता है। यह वह ताना बाना है जो क़ुदरत ने अपने आप बुना है। गोया दूसरे मानों में उसको क़ुदरत का माद्दी हिस्सा होना कह सकते हैं। वह माद्दियत भी कैसी जो बराय नाम और कहने मात्र, और जो, उस शुद्ध हालत का इन्कशाफ़ (स्पष्ट) कराती है जिस पर हमको पहुँचना है। अब जिस चीज़ का एहसास होता है उसके लिये लफ़्ज़ माद्दियत यों इस्तेमाल किया गया है कि यह चीज बहरहाल वह्म व गुमान में आ जाती है और मुमकिन है कि अक्सर लोग इसको धोके से मायावी ग़िलाफ़ कह जायें। मगर वह इस हालत का सही तर्जुमा

न होगा। यह वह हालत है जो वाक़ई मायावी परदे में प्रवेश किये हुए है। अब इसको खाना खाते वक़्त हम ख़्याल में लाते हैं जिसका असर उस माद्दा पर पड़ता है जो उसके नीचे है और जिस वक़्त हम ग़िज़ा खाते हैं तो जो चीज़ कि उस वक़्त हमारे सामने हैं ग़िज़ा में प्रवेश होने लगती है और उसका असर ग़िज़ा में काफ़ी तौर से सरायत (प्रवेश) करने लगता है। गोया वह चीज़ जो हम खा रहे हैं उसको भी हमने उसके ज़ेरे असर कर लिया है जिसका असर हमारी रगों में जाकर उनमें शामिल हो जाता है। गोया एक चीज़ जो बेरुनी हालत में भर रही है हमने उसका कितना अच्छा इस्तेमाल करके अपना काम निकाला। इससे वह परमाणु या ज़र्रात जो जिस्म में है शुद्ध होना शुरू हो जाते हैं और ख़्याल का झटका उस चीज़ में भी पैदा हो जाता है जो ग़िज़ा में शामिल होकर हमारी तन्दुरुस्ती रुहानी और जिस्मानी में मददगार होता है। प्राण की ताक़त सब जगह छाई हुई है। कोई चीज़ इससे बरी नहीं है। ग़िज़ा में भी है और उसके बाहर भी। हम अपने ख़्याल का झटका उस चीज़ में देने लगते हैं जिससे उसकी ऐसी हालत हो जाती है जैसे कि दो पत्थरों के रगड़ने से शरारा (चिनगारी) पैदा होता है और उसकी हालत उस ताक़त से जिसके ज़रिये शरारा बरामद हुआ है मुख़्तलिफ़ और शुद्ध है और ज़ात के सम्बन्ध से जो चीज़ कि बरामद होती है उसी के द्वारा हम ज़ात की तरफ़ पहुँचते हैं इसलिए कि उसके बाद वाली हालत में यह ताक़त नहीं है कि जो हमको अस्ल कैफ़ियत तक पहुंचा सके। वहम व गुमांन सब इसके पीछे छूट जाते हैं। यह हमारे लिए ज़ात में पहुँचने का रास्ता बना देतो है। अब ग़िज़ा में शुद्धता का ख़्याल बांधने से उसमें हमने वह ताक़त दे दीं है जिसका शरारा हमको उस परदे तक ले जाता है जिसको हमने ज़ात के बाद वाली हालत कहा है। गोया इतनी मन्ज़िल हम इतनी आसानी से पार कर जाते हैं।

अपने नियम में हमने ईश्वर की याद में भोजन करना फ़र्ज़ बताया

है। हमारे सब काम ऐसे होना चाहिये जिससे हमें अपने मक़सद बरारी (ध्येय की प्राप्ति) में मदद मिले। अब चूंकि ग़िज़ा खाते वक़्त हम सबसे आख़िरी चीज़ जिस पर हमको पहुँचना है ख़्याल बांधते हैं इसलिए कि हम उसका भी असर कुछ न कुछ साथ-साथ ले लेवें और शुद्धता में एक गुना और इज़ाफ़ा हो जावे ताकि उसका असर भी दुगुनी ताक़त के साथ उस पर गिरे और उसकी ताक़त ज़्यादा हो जाय। हमारा आग़ाज़ पवित्रता से हुआ है। वह शुद्ध धारें जो हमारे ज़हूर (उद्भव) का बायस हुई हैं शुद्ध ही मसकन (स्थान) से निकली हैं और इन्हीं की वजह से हमको शुद्धता का ख़्याल पैदा होता रहता है। वह धारें जो हर जगह मौजूद हैं.शुद्ध ही हालत में है। ऐसा कभी नहीं हुआ कि उन धारों में अशुद्धता पैदा हुई हो। यहां तक कि ज़माना भी उन पर असर न डाल सका क्योंकि वह धारें एक ताक़तवर चीज़ से बरामद हुई हैं। पवित्रता उसमें कुल्लियतन दौड़ी हुई है। वह ज़ात का भन्नाटा जो आग़ाज़ आलम को बायस हुआ है उसके फ़ेल ही के असरात हैं जो धारों की शक्ल में नुमायां है, और, सब पवित्र हैं और उनसे जो चीज़ें बनी है इब्तदाई हालत में वह भी शुद्ध थीं। मगर इन बनी हुई चीज़ों पर ज़माने के असरात ने उनको ख़ालिस हालत में नहीं रखा और यह दरअस्ल हमारा ही क़रिश्मा था जैसा कि उसूल नम्बर (४) मे बयान हो चुका है।

नेचर की कमाई हुई चीज़ किस क़दर शुद्ध हालत में है। इसलिए कि उसकी बुनियाद शुद्धता से हुई है। आपकी कमाई हुई चीज़ उस वक्त शुद्ध हालत में रह सकती है जबकि उसकी भी कमाई शुद्धता और पवित्रता के साथ हो। इसमें जो असरात होंगे अपने क़रीब तर परदे पर अपना असर डालेंगे और इस जाल को जिसको आपने बुना है शुद्ध करने में मदद देगें। इसलिए महात्माओं ने शुद्ध और पवित्र कमाई पर बहुत ज़ोर दिया है।

उसूल नम्बर-९

अपना रहन-सहन और ब्योहार ऐसा उमदा बना ले कि जिसको देखने से लोगों में नेक ख़्याली का एहसास हो और लोग उससे मुहब्बत करने लगें।

हमको ताक़त अपने ख़्याल से मिलती है। यह कब ? जब उसी के तरीक़े में अपनी चीज़ों में ओर जो उसकी बनाई हुई है हमआहनगी (समरसता) पैदा कर लें। लफ्ज़ ब्योहार इतना वसी लफ़्ज़ है कि यह कुल उस दायरे को मुहीत (घेर) कर लेता है जो ज़ात के बाद नमोदार हुआ है। ईश्वर के ब्यवहार में यकसानियत (समानता) भी है मगर एक मानों में। मसलन, वह सब को बराबर रोशनी देता है, सब के सांस लेने के लिए उसने हवा पैदा की है, और बहुत सी ऐसी चीज़ें बनाई हैं जो कि ज़िन्दगी को बढ़ानेवाली हैं, बल्कि ज़िन्दगी का इनहेसार (निर्भरता) इन्ही पर है। इसको बरतावे की यकसानियत कहते हैं। अब दूसरी चीज़ आती है जो उसके पास बन-बनकर पहुंचती रहती है। उसके साथ बरतावा और तरह का होता है। ज़ाहिर है कि मिट्टी से बनी हुई चीज़ जब सामने आती है तो इन्सान की नज़र उस पर और तरह की पड़ने लगती है। मिट्टी से जब हम खिलौना बनाते हैं तो एक गुना हमारी रग़बत (आकर्षण) बमुक़ाबले मिट्टी के इससे ज़्यादा हो जाती है। इस तरह से जब इन्सान बना बनाया

उसके सामने पहुंचता है तो उसकी निगाह कुछ और ही हो जाती है। बस मालूम हो गया कि हमको अपने आपको ऐसा बनाना चाहिए ताकि उसकी निगाह हम पर ऐसी घूमे कि हम उस रोशनी को बराह रास्त लेने के लिये ख़ते उस्तवा (केन्द्र विन्दु) बन जांय। यह ब्यवहार क़ुदरत का है जिसकी हमें नक़ल करनी चाहिये। अब रोज़ाना की ज़िन्दगी में जो हमारे सामने है हम ऐसे ही ब्यवहार अदा करें जो उसने (ईश्वर ने) हमारे साथ किये हैं और कर रहा है।

क़ुदरती ब्यवहार ज़ाहिर कर दिये गये हैं और उनके असरात भी हर चीज़ को देखने से नुमायाँ होते हैं। मुख़तलिफ़ रंग मुख़तलिफ़ चीजों में पाये जाते हैं। बाग़ में एक फूल खिलता है उसका रंग सुर्ख़ होता है। दूसरा फूल वहीं पर उगता है जिसका रंग ज़र्द (पीला) या नीला होता है। गोया क़ुदरत अपना जलवा मुख़तलिफ़ रंगों में दिखा रही है। जिसकी जैसी लियाक़त और इस्तेदाद (क्षमता) हैं उसको उसी के मुताबिक़ हिस्सा मिल रहा है। गोया वह उनके साथ इस तरह का ब्यवहार अपना रूप लिये हुए कर रही है। बस यही मिसाल हमको हर सूरत में बरतावों के लिये मद्दे नज़र रखना चाहिये। जहाँ पर जैसी ज़रूरत हो वैसा ही हम ब्यवहार अदा करें। जब इस काम की हमआहनगी क़ुदरत से हो जावेगी तो उसमें असर पैदा हो जावेगा जिसका नतीजा यह होगा कि लोगों का खिंचाव हमारी तरफ़ होने लगेगा। अगर यह चीज़ ठीक तौर से अदा हो जाय और आप उसी के मुताबिक़ इसका हक़ दूसरों को देने लगें तो उनकी क़शिश (आकर्षण) अज़ख़ुद (स्वतः) आपकी तरफ़ मबज़ूल (खिंची) हो जायगी और इसी क़शिश को मुहब्बत कहते हैं। जब दूसरों का हक़ आपके मद्दे नज़र होगा तो दूसरे लोग इस ताक़त के ज़ेरे असर होकर जो आपमें हमआहनगी पैदा होने से हुई है आपसे भी वही बरताव रखेंगे जिसके आप अहल (पात्र) हैं।

उसूल नम्बर-१०

अगर कोई अपराध भूल से हो जावे तो सोते समय ईश्वर को अपने सन्मुख समझ कर उससे दीनता की हालत में क्षमा मांगे और पश्चाताप करे। और इसके लिये प्रार्थना और कोशिश करे कि आइन्दा कोई अपराध न होने पाये।

कमाल इनसानी (मानव जीवन की पूर्णता) इसमें है कि मालिक को अपना मालिक और अपने आपको उसका बन्दा समझे, और, बन्दगी अदा करता रहे। ऐसा करने से गोया आपने अपने में नफ़ी (निषेध) की हालत क़ायम कर ली। और जिसकी वजह से उसकी निगाह आप पर सीधी पड़ रही है। गोया मालिक की नज़र आप पर काफ़ी तौर पर मबज़ूल (खिची) है, और आपने उससे एक क़िस्म का सम्बन्ध जोड़ लिया है। जब यह हालत है तो हमको लाज़िम आता है कि हम अपना हक़ ऐसे ही तरीक़ों में अदा करते रहें। और इस बात को यानी उस रिश्ते को बराबर क़ायम रखें ताकि मालिक की अज़मत (बड़प्पन) हम पर मनक़ूश (अंकित) होती रहे और उसकी निगाह हमेशा हम पर सीधी पड़ती रहे। बन्दे को सिर्फ़ इस बात से ग़रज़ है कि उसका मालिक उसकी तरफ़ किसी तरीक़े में ख्याल रखे और नज़दीकी क़ायम

रहे। अब शराफ़त कुछ और रुख़ बदलती है। जब हमने उसको अपना मालिक समझ लिया है तो हर ग़लती जो सहवन (भूल से) हो जाय और उसूल के ख़िलाफ़ हो तो हम उस ग़लती को उसके सामने ख़तावार (दोषी) की हैसियत से जैसे को तैसा रख देवें। ऐसा करने से हमारी बेचारगी साबित होती है। और मालिक को भी ख़्याल होता है कि बन्दा ने जो ग़लती की है वह वाक़ई क़ाबिल माफ़ी है। इसलिए बेचारगी का ख़्याल बन्दे के दिल में मौजूद है। तब तो उसने इस चीज़ को मालिक के सामने पेश किया है। इस अहद (भाव) में वह लोच और नरमी है जिसका तर्जुमा अल्फ़ाज़ से अदा नहीं हो सकता। इस लोच का नक़्शा एक और फिरता है और वह बेचारगी का यक़ीन दिलाता है। इसके मानी यह होते हैं कि वह चीज़ें जो उसमें हायल (रुकावट) थीं उनको अब उठा दिया है। वह वज़न जो उस पर मौजूद था अब हट गया है और उसकी सूरत अब बिलकुल ख़ुलूस की रह गई है जो नेचर की उस धारा से मिलती जुलती है जिस पर कि मल, विक्षेप, और आवरण के ग़िलाफ़ नहीं हैं। गोया उस चीज़ को हम ख़ालिस सूरत में रिश्ते बन्दगी ज़ोड़ कर लाये हैं। अब यह चीज़ सादगी का एहसास दिलाती है जो वाक़ई क़ुदरत की जान है। बढ़ते-बढ़ते यह हालत यहां तक हो जाती है कि उसी चीज़ में हम अपने आपको लिपटे हुए महसूस करते हैं गोया हमातन (पूर्णतया) हमारी वही कैफ़ियत हो जाती है जिसको कि हमें हासिल करना है। ग़लतियां जिससे कि बन्दा कभी बरी नहीं हो सकता इस दायरे में आकर ऐसी रह जाती हैं गोया वह चीज़ ख़ुद अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो बैठती है। इस रिश्ते के जोड़ने से पहले मुमकिन है कि बड़ी बड़ी ग़लतियां सरज़द (निर्मित) हों और फिर यह कम होती चलें यहां तक कि उनकी शक्लें मिटने लगें। या यूँ कहिये कि हमने अपनी क़ुव्वत इरादी का झटका इसमें काफ़ी तौर पर लगा दिया है और उसकी शक्ल एक तरह की पश्चाताप की बन गई है। पश्चाताप

और कुछ नहीं है बल्कि यह खटक है जो उस लहर में पैदा हो जाती है और इसको ऊपर से यक्सानियत क़ायम रखने के लिए एक लहर दौड़ने लगती है। गोया इस चीज़ को जिसको मैंने खटक के नाम से मनसूब किया है दूसरी चीज़ आकर इसको साफ़ कर देती है। यह पश्चाताप की सूरत है।

जिस हालत को मैंने बेचारगी कहा है उस हालत को पैदा कर लेना दीनता की हालत कहलाती हैं, और, यह ऐसी चीज़ है कि जिसके हिस्से में आ गई उसने वाक़ई सब कुछ पा लिया है। इसमें मासूमियत की हालत मौजूद है गो वह बादी उल नज़ार (ऊपरी तौर पर) में ऐसी मालूम न होवे। जब यह बात है तो वह ग़लती वाक़ई ग़लती नहीं रही। इसलिए कि इस हालत ने उसको क़तई तौर पर धो दिया है। अब एक हिस्सा बन्दगी का यह आता है कि हम आइन्दा के लिए अपने आपको ऐसा होशियार करें कि फिर ग़लती न होने पावे, और उसकी सूरत यही हो सकती है कि हम बार बार उस मालिक की दरगाह में रुजू हों कि हमको इस्तग़ना (स्थिरता) की हालत अता फ़रमाये कि यह अपराध दोबारा न हो। चूंकि हम बन्दा की हैसियत से उस दायरे में शामिल हुए हैं लेहाज़ा हम पर यह लाज़िम आ जाता है कि फ़रायज़ अदा करें और इस बात की कोशिश करें और ख़्याल रखें कि इस बात से हम दूर रहें जिसकी कि क़ानून क़ुदरत में मुमानियत है। यह बात उस वक़्त अच्छी तरह होगी जबकि जो फ़ासला कि हम बन्दा और आक़ा के दरमियान क़ायम किये हुए हैं इसको नज़दीकतर करें। इस वजह से बेहतर तरीक़ा यही हो सकता है कि उसकी मौजूदगी अपने ख़्याल के परदे के सामने ले आवें।

सोते वक़्त इसका करना यूं अच्छा समझा गया है कि उस वक़्त हम अपने सब झंझटों से फ़रागत पाये होते हैं और सिवाय आराम

करने के हमको कोई काम करना बाक़ी नहीं रह जाता है। गोया सिर्फ़ एक नुक़्ता सोने और आराम करने का इन्सान के सामने रहता है और हर काम से अपने आपको फ़ारिग़ पाता है या यूं कहो कि वह अपने आपको किसी हद तक आज़ाद पाता है। यह आज़ादी भी क़ुदरत की एक इस्तग़ना की हालत कही जाती है। गोया दूसरे मानों में आप क़ुदरत के किसी हिस्से से हमआहनगी अख़्तयार किये हुए हैं। इसलिए उस वक़्त हमको इस काम के करने की ज़्यादा ताक़त होती है। यही वजह है कि उस वक्त पर दुआ में ज़्यादा असर होता है और हर काम जो उसके मुताबिक़ किये जाते हैं ठीक बैठते हैं। इस इस वक़्त से फ़ायदा उठाना चाहिये और जो काम कि इस वक्त के लिये हैं उसको ज़रूर करना चाहिये।